वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 163
ISBN 978-93-80353-14-2

श्री ऋषभदेव विधान

–रचयित्री–

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

श्री ज्ञानमती माताजी

हस्तिनापुर में जन्मे तीर्थंकर, चक्रवर्ती एवं कामदेव पद से समन्वित भगवान श्री शांतिनाथ के केवलज्ञानकल्याणक, पौष शु. दशमी-10 जनवरी 2014 के अवसर पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अमृत महोत्सव 2013-14 के अन्तर्गत प्रकशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.ए फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

सातवाँ संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
2200 प्रतियाँ	पौष शु. दशमी, 10 जनवरी 2014	24/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

-: निर्देशक एवं सम्पादक:-

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

-: प्रबंध सम्पादक :-

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण-सन् 1997, प्रतियाँ 5200, तृतीय संस्करण-सन् 2006, प्रतियाँ 2200,
चतुर्थ संस्करण-सन् 2008, प्रतियाँ 2200, पंचम संस्करण-सन् 2009, प्रतियाँ-2200
छठा संस्करण-सन् 2010, प्रतियाँ-2200

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

पीठाधीश की कलम से..........

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने बीसवीं-इक्कीसवीं शताब्दी में साहित्य सृजन की अविरल धारा को प्रवाहित करके जैनधर्म की अद्‌भुत प्रभावना की है तथा जैन साहित्य जगत पर भी अनंत उपकार किये हैं। विशेषरूप से आपकी लेखनी से प्रसूत पद्य साहित्य अर्थात् पूजा-विधान से जन-जन को अमोघ शस्त्र के रूप में भक्ति का मार्ग प्राप्त हुआ है।

पूज्य माताजी द्वारा लिखित साहित्य को सतत प्रकाशित करने के लिए पूज्य माताजी की ही पुण्य प्रेरणा से सन् 1972 में स्थापित दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के अन्तर्गत वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला की भी स्थापना की गई, तब से लगातार इस ग्रंथमाला द्वारा साहित्य प्रकाशन का कार्य किया जा रहा है। जहाँ इस ग्रंथमाला ने लाखों श्रावकों एवं श्रद्धालु भक्तों को ज्ञान का लाभ प्रदान किया है, वहीं विशिष्ट एवं गुणवत्तापूर्ण प्रकाशन के माध्यम से इस ग्रंथमाला को भी समाज के मध्य एक विशिष्ट ख्याति प्राप्त हुई है।

इस ग्रंथमाला से जहाँ पूज्य माताजी द्वारा टीकाकृत षट्खण्डागम जैसे महान सिद्धान्त ग्रंथों तथा नियमसार, समयसार, गोम्मटसार, अष्टसहस्री, कातंत्र व्याकरण आदि जैसे मूल आगम ग्रंथों का प्रकाशन होता है, वहीं मुख्यतः पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी व प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा लिखित विभिन्न बड़े-छोटे पूजा-मण्डल विधान आदि का प्रकाशन भी समाज के लिए विशेष मांग हेतु बना रहता है। आज हम इस ग्रंथमाला को अत्यन्त सौभाग्यशाली मानते हैं, जिसके माध्यम से प्रकाशित हो रहे सत् साहित्य की वर्ष भर पूरे 365 दिन भारत के कहीं न कहीं, किसी न किसी मंदिर में मण्डल विधान या साहित्य वितरण आदि के लिए मांग आती रहती है और जैनधर्म व भक्तिमार्ग की प्रभावना में यह ग्रंथमाला नित्य ही तत्पर रहती है।

विशेषरूप से इस ग्रंथमाला द्वारा समाज को लागत मूल्य से भी कम राशि पर साहित्य उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाता है, जिससे कि सुविधापूर्वक जन-जन तक साहित्य पहुँच सके। आगे भी इसी प्रकार यह ग्रंथमाला अपना दायित्व निभाती रहे, यही भावना है। वर्तमान में प्रकाशित हो रही इस पुस्तक के माध्यम से आप सभी श्रावकजन विशेष धर्मलाभ को प्राप्त करें तथा जैनधर्म का यह ज्ञान आपके सम्यक्त्व को दृढ़ करने में सदा सहकारी बनकर मोक्षमार्ग को प्रशस्त करे, सभी भक्तों को मेरी यही शुभकामनाएं एवं मंगल आशीर्वाद है।

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

प्रस्तावना

-आर्यिका चंदनामती

पूजा विधानों की श्रृँखला में यह ''ऋषभदेव मण्डल विधान'' पूज्य गणिनी आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने रचकर नूतन कृति के रूप में हमें प्रदान किया है। जिस प्रकार से शान्ति विधान को लोग एक दिन में सम्पन्न करके भगवान शांतिनाथ की आराधना कर लेते हैं, जिससे अनेक अघटित घटनाओं के संकट से उनकी रक्षा हो जाती है, उसी प्रकार प्रथम तीर्थंकर भगवान श्री ऋषभदेव की भक्ति में यह विधान भी आप एक दिन में ही सम्पन्न कर सकते हैं और फिर स्वयं अनुभव आएगा कि किस प्रकार से आपके मनोरथ सिद्ध होते हैं।

सन् 1993-94 में पूज्य माताजी का अयोध्या में प्रवास रहा, उसी दौरान संघस्थ ब्र. कर्मयोगी रवीन्द्र कुमार जी के निवेदन पर उन्होंने यह विधान लिखा था किन्तु उसके पश्चात् संघ के निरन्तर विहार एवं समारोह में व्यस्तता के कारण इसका प्रकाशन 3 वर्षों के बाद हो पाया।

भगवान ऋषभदेव की भक्ति में अचिन्त्य शक्ति है, इसका प्रत्यक्ष अनुभव करके पूज्य माताजी ने इस विधान में जगह-जगह वर्णन किया है कि हे प्रभो! आपने अर्हन्त अवस्था में 46 गुण प्रगट किये तथा 18 दोषों को नष्ट करके जिस प्रकार से अलौकिक तीर्थंकर पद प्राप्त किया है उसी प्रकार से मुझे भी आपकी भक्ति से दोषों को नष्ट करने की शक्ति प्राप्त होवे। इसीलिए इस विधान में पाँच वलय के माध्यम से अर्घ्यों का विभाजन किया है। प्रथम वलय में 46 गुणों के 46 अर्घ्य, द्वितीय में 18 दोषों से रहित अर्हन्त के 18 अर्घ्य, तृतीय में 48 प्रकार के संकटों के निवारण हेतु 48 अर्घ्य, चतुर्थ में भगवान के 84 गणधरों के 84 अर्घ्य तथा पंचम वलय में सिद्ध पद के 8 गुणों के प्रतीक में 8 अर्घ्य हैं। इस प्रकार पूरे विधान में एक पूजा, 204 अर्घ्य तथा 5 पूर्णार्घ्य हैं। प्रारंभ में मंगलाचरण में भगवान ऋषभदेव का पूरा जीवन परिचय ही दर्शा दिया गया है तथा विधान की अन्तिम प्रशस्ति में पूज्य गणिनी माताजी ने अपनी गुरु परम्परा का वर्णन करते हुए विधान की अक्षुण्णता की भावना व्यक्त करते हुए लिखा है कि-

जब तक जिनशासन इस जग में, सब भविजन मन आनंद भरें।
तब तक मुझ ज्ञानमती कृति यह, भाक्तिकजन की सब सिद्धि करे।।

यह विधान की नूतन कृति आपके जीवन को मंगलमय बनावे, भगवान ऋषभदेव की भक्ति से अपने मनवांछित कार्य की सिद्धि करें, यही भावना है।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–**गोयल, **नाम–**कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

–कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत प्रतिवर्ष लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है-कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, चौबीस तीर्थंकर मंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

12. गणिनी ज्ञानमती दिगम्बर जैन पत्राचार परीक्षा केन्द्र का संचालन।

13. इंटरनेट पर जैनधर्म के इन्साइक्लोपीडिया (www.encyclopediaofjainism. com) का निर्माण।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ तथा महावीर जी अतिशय क्षेत्र के महावीर धाम परिसर में निर्मित पंचबालयति दिगम्बर जैन मंदिर का संचालन होता है। वर्तमान में इस संस्थान के अन्तर्गत सम्मेदशिखर जीतीर्थ पर ''आचार्य श्री शांतिसागर धाम'' का निर्माण प्रारंभ किया जा रहा है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, राणाबावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कॉनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
21. श्रीमती आदर्श जैन ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
22. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)।

श्री ऋषभदेव विधान

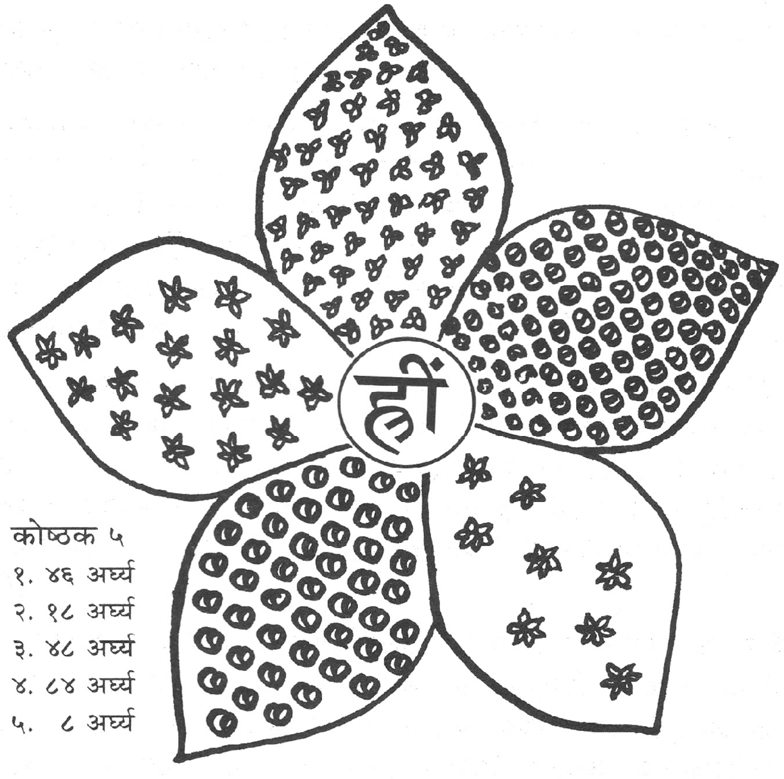

ॐ नम: सिद्धेभ्य:

श्री ऋषभदेव विधान

मंगलाचरण

-शंभुछंद-

हे आदिनाथ! हे आदीश्वर! हे ऋषभ जिनेश्वर! नाभिललन!
पुरुदेव! युगादि पुरुष ! ब्रह्मा, विधि और विधाता मुक्तिकरण।।
मैं अगणित बार नमूँ तुमको, वन्दूँ ध्याऊँ गुणगान करूँ।
स्वात्मैक परम आनन्दमयी, सुज्ञान सुधा का पान करूँ।।1।।

आषाढ़ वदी दुतिया तिथि थी, मरूदेवी गर्भ पधारे थे।
श्री ह्री धृति आदि देवियों ने, माता के चरण पखारे थे।।
शुभ चैत्र वदी नवमी तिथि थी, भगवान यहाँ जब थे जन्में।
तब मेरू सुदर्शन के ऊपर, अभिषेक किया था इन्द्रों ने।।2।।

वो घड़ी धन्य थी धन्य दिवस, धन धन्य अयोध्या नगरी थी।
श्री नाभिराज भी धन्य तथा, तब धन्य प्रजा भी सगरी थी।।

प्रभु ने असि मसि आदिक किरिया, उपदेशी आदि विधाता थे।
थे युग के आदिपुरुष ब्रह्मा, श्रावक मुनि मार्ग विधाता थे।।3।।

थे कनक वर्ण धनु पंच शतक, तनु वे युग के अवतारी थे।
आयू चौरासी लाख पूर्व, धारक वृष लक्षण धारी थे।।
सब परिग्रह ग्रंथी को तजकर, निर्ग्रंथ दिगम्बर रूप धरा।
वह चैत्र वदी नवमी शुभ थी, जिस दिन प्रभु ने कचलोंच करा।।4।।

षट् मास योग में लीन रहे, लंबित भुज नासादृष्टी थी।
निज आत्म सुधारस पीते थे, तन से बिल्कुल निर्ममता थी।।
फिर ध्यान समाप्त किया प्रभु ने, आहार विधी बतलाने को।
भवसिंधू में डूबे जन को, मुनिमार्ग सरल समझाने को।।5।।

षट् मास भ्रमण करते-करते, प्रभु हस्तिनागपुर में आये।
सोमप्रभ नृप श्रेयांस तभी, आहारदान दे हर्षाये।।
रत्नों की वर्षा हुई गगन से, सुरगण मिल जयकार किया।
धन-धन्य हुई वैशाख सुदी, अक्षय तृतिया आहार हुआ।।6।।

जब आप क्षपक श्रेणी चढ़कर, घाती पर ध्यान चक्र छोड़ा।
एकादशि फाल्गुन कृष्णा थी, केवलश्री से नाता जोड़ा।।
त्रिभुवन में ज्ञान लता फैली, भविजन को छाया सुखद मिली।
फिर माघ कृष्ण चौदश के दिन, मुक्तिश्री प्रभु को स्वयं मिली।।7।।

क्रोधादिक रिपु को जीत प्रभो, स्वात्मा से जनित सुखामृत को।
पीकर अत्यर्थतया निशदिन, भवदधि से निकाला आत्मा को।।
त्रिभुवन के मस्तक पर जाकर, अब तक व अनंते कालों तक।
ठहरेंगे वे वृषभेश! मुझे, शुभ ''ज्ञानमती'' श्री देवें झट।।8।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपामि।
(मंडल के ऊपर पुष्पांजलि क्षेपण करें)

श्री ऋषभदेव पूजा

अथ स्थापना

तर्ज–ऐ माँ तेरी सूरत से अलग...

जिनवर की शरण में आये हैं, तन मन धन अर्पण कर देंगे।
भगवान-भगवान तेरी भक्ती के लिये, जीवन भी समर्पण कर देंगे।।टेक.।।

इस नगरि अयोध्या की, धनपति ने रचना की।
माता के आंगन में, रत्नों की वर्षा की।।
आदीश्वर तीर्थंकर प्रभु का, शिर नत कर वंदन कर लेंगे।।भग.।।

श्री ऋषभदेव का हम, आह्वानन करते हैं।
निज हृदय कमल में प्रभु, स्थापन करते हैं।।
हम सन्निधीकरण विधी करके, प्रभुपद का अर्चन कर लेंगे।।भग.।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रद! श्रीऋषभदेव तीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रद! श्रीऋषभदेव तीर्थंकर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रद! श्रीऋषभदेव तीर्थंकर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक–शंभु छंद

पुरुदेव सुयश सम उज्ज्वल जल, लेकर झारी भर लाये हैं।
निज समरस सुख पाने हेतु, प्रभु चरण चढ़ाने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव गुणों सम अतिशीतल, चंदन घिस कर ले आये हैं।
निज की शीतलता पाने को, प्रभु चरण चढ़ाने आये हैं।।

श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।2।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव सौख्य सम खण्ड रहित, उज्ज्वल तंदुल ले आये हैं।
निज सुख अखण्ड पाने हेतू, प्रभु पुंज चढ़ाने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।3।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव गुणों सम अति सुगंध, पुष्पों को चुनकर लाये हैं।
निज गुण सुगंधि पाने हेतू, प्रभु चरणों पुष्प चढ़ाये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।4।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव पुष्टि सम नानाविध, पकवान बनाकर लाये हैं।
निज आत्म तृप्ति पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।5।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव ज्ञान सम ज्योतिर्मय, कर्पूर जलाकर लाये हैं।
निज ज्ञान ज्योति पाने हेतू, हम आरति करने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।6।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव गुणों की सुरभि सदृश, वर धूप सुगंधित लाये हैं।
निज आत्मसुरभि पाने हेतू, अग्नी में धूप जलाये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।7।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव सुखामृत सदृश मधुर, रसभरे बहुत फल लाये हैं।
निज मोक्ष सुफल हेतू, भगवन्! फल आज चढ़ाने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।8।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव गुणों के सम अनर्घ्य, यह अर्घ्य सजाकर लाये हैं।
निज तीन रत्न पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आये हैं।।
श्री ऋषभदेव के चरण कमल, हम मन वच तन से नित ध्यावें।
निज आत्मसिद्धि को पा करके, परमानंदामृत सुख पावें।।9।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेर छंद

सरयू नदी का जल भरें, हम स्वर्ण भृंग में।
त्रयधार दे धारा करें, प्रभु पादकमल में।।
तिहुंलोक में सुख शांति हो, यह भावना करें।
हो मन पवित्र मेरा यही याचना करें।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला वकुल गुलाब सुरभि पुष्प चुन लिये।
प्रभु पाद पंकरूह में कुसुम अंजली किये।।
धन धान्य सौख्य संपदा स्वयमेव आ मिले।
भक्ती से शक्ति हो प्रगट शिवयुक्ति भी मिले।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रथम कोष्ठक पूजा

छियालीस गुणों के अर्घ्य–अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

जिनवर गुणमणि तेज, सर्वलोक में व्यापता।
हो मुझ ज्ञान अशेष, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

अथ मंडलस्योपरि प्रथमकोष्ठकस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभु छंद

श्री आदिनाथ के जन्म समय से, दश अतिशय सुखदाता हैं।
उनके तनु में नहिं हो पसेव, यह अतिशय गुण मन भाता है।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।1।।

ॐ ह्रीं निःस्वेदत्वसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माता की कुक्षी से जन्मे, औदारिक तनु मानव का है।
फिर भी मलमूत्र नहीं तुममें, यह अतिशय पुण्य उदय का है।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।2।।

ॐ ह्रीं मलरहितसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु तन में श्वेत रुधिर पयसम, यह अतिशय तीर्थंकर के हो।
अतएव मात सम त्रिभुवन जन, पोषण करते उदारमन हो।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।3।।

ॐ ह्रीं क्षीरसमरुधिरत्वसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम संहनन सुवज्रवृषभ-नाराच कहाता शक्ति धरे।
यह अन्य जनों को सुलभ तथापी, तुममें अतिशय नाम धरे।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।4।।

ॐ ह्रीं वज्रऋषभनाराचसंहननसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु तनु में एक एक अवयव, सब माप सहित अतिशय सुन्दर।
यह समचतुरस्र नाम का ही, संस्थान कहा त्रिभुवन मनहर।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।5।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में उपमारहित रूप, अतिसुन्दर अणुओं से निर्मित।
सुरपति निज नेत्र हजार बना, प्रभु को निरखे फिर भी अतृप्त।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।6।।

ॐ ह्रीं अनुपमरूपसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव चंपक की उत्तम सुगंधि, सम देह सुगंधित प्रभु का है।
यह अतिशय अन्य मनुज तनु में, नहिं कभी प्राप्त हो सकता है।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।7।।

ॐ ह्रीं सौगन्ध्यसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ एक हजार आठ लक्षण, प्रभु तनु का अतिशय कहते हैं।
यह तीन जगत में भी उत्तम, अतएव इन्द्र सब नमते हैं।।

मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।8।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरसहस्रशुभलक्षणसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तनु में अनंत[1] बल वीर्य रहे, जन्मत ही यह अतिशय प्रगटे।
अतएव हजार हजार बड़े, कलशों से न्हवन भि झेल सकें।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।9।।

ॐ ह्रीं अनंतबलवीर्यसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित मित सुमधुर वाणी प्रभु की, जन मन को अतिशय प्रिय लगती।
त्रिभुवन हितकारी भावों से, यह अद्‌भुत वचन शक्ति मिलती।।
मैं पूजूँ इस अतिशययुत को, वे तीर्थंकर पदधारी हैं।
उन त्रिभुवन गुरु की पूजा ही, भव भय संकट परिहारी है।।10।।

ॐ ह्रीं प्रियहितमधुरवचनसहजातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यग्दर्शनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरेन्द्र छंद

केवलज्योति प्रगट होते इक[2], दश अतिशय होते हैं।
चारों दिश में सुभिक्ष होवे, चउ चउ सौ कोसों में।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु;ख से छूटूँ।।11।।

ॐ ह्रीं गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षताकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञानफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान प्रगट होते ही जिनवर, गगन गमन करते हैं।
बीस हजार हाथ ऊपर जा, अधर सिंहासन पर हैं।।

---

1. ''अणंतबलविरियं'' तिलोयपण्णत्ति अ.-4।

2. भगवान का मुख पूर्व या उत्तर दिशा में ही रहता है फिर भी सभा में सबको अपनी-अपनी तरफ मुख दिखते हैं। यह ''चतुर्मुख'' नाम का अतिशय है।

घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।12।।

ॐ ह्रीं गगनगमनत्वकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु के गमन शरीर आदि से, प्राणी वध नहिं होवे।
करुणासिंधू अभय दाता को, पूजत निर्भय होवें।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।13।।

ॐ ह्रीं प्राणिवधाभावकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोटीपूर्व वर्ष आयू में, कुछ कम ही वर्षों में।
केवलि का उत्कृष्ट काल यह, बिन भोजन है तन में।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।14।।

ॐ ह्रीं कवलाहाराभावकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव मनुज तिर्यंच आदि उपसर्ग नहीं कर सकते।
केवलि प्रभु के कर्म असाता, साता में ही फलते।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।15।।

ॐ ह्रीं उपसर्गाभावकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण की गोल सभा में, चहुंदिश प्रभु मुख दीखे।
चतुर्मुखी ब्रह्मा यद्यपि ये, पूर्व उदङ् मुख तिष्ठे।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।16।।

ॐ ह्रीं चतुर्मुखत्वकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञानफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमौदारिक पुद्गल तनु भी, छाया नहीं पड़े हैं।
केवलज्ञान सूर्य होकर भी, सबको छाँव करे हैं।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।17।।

ॐ ह्रीं छायारहितकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञानफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रों की पलकें नहिं झपकें, निर्निमेष दृष्टि है।
जो पूजें वे भव्य लहें तुम, सदा कृपादृष्टि हैं।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।18।।

ॐ ह्रीं पक्ष्मस्पंदरहितकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में जितनी विद्या हैं, सबके ईश्वर प्रभु हैं।
जो भवि पूजें वे सब विद्या, अतिशय प्राप्त करे हैं।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।19।।

ॐ ह्रीं सर्वविधेश्वरताकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केश और नख बढ़ें न प्रभु के, चिच्चैतन्य प्रभू हैं।
दिव्यदेह को धारण करते, त्रिभुवन एक विभू हैं।।
घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दु:ख से छूटूँ।।20।।

ॐ ह्रीं नखकेशवृद्धिरहितकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञान-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुपम दिव्यध्वनीं त्रय संध्या, मुहूर्त त्रय त्रय खिरती।
चारकोश तक सुनते भविजन, सब भाषामय बनती।।

---

1. तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में इस दिव्यध्वनि को केवलज्ञान का अतिशय मानकर केवलज्ञान के ग्यारह अतिशय गिनाये हैं और देवोपनीत अतिशय तेरह ही माने हैं। अन्यत्र ग्रंथों में केवलज्ञान के दश और देवकृत चौदह अतिशय माने हैं। यहाँ तिलोयपण्णत्ति के आधार से लिया है।

घातिकर्म के क्षय से अतिशय, प्रगटे उनको पूजूँ।
मुझमें केवलज्ञान सौख्य हो, भव भव दुःख से छूटूँ।।21।।

ॐ ह्रीं अक्षरानक्षरात्मकसर्वभाषामयदिव्यध्वनिकेवलज्ञानातिशयगुणमंडिता अतिशायिसम्यग्ज्ञानफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छंद

प्रभु के श्रीविहार में दश दिश, संख्यात कोश तक असमय में।
सब ऋतु के फल फलते वह फूल, खिल जाते हैं वन उपवन में।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।22।।

ॐ ह्रीं सर्वर्तुफलादिशोभिततरूपरिणाम-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंटक धूली को दूर करे, जनमन हर सुखद पवन बहती।
प्रभु के बिहार में बहुत दूर तक, स्वच्छ हुई भूमि दिखती।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।23।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमितधूलकंटकादि-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जीव पूर्व के बैर छोड़, आपस में प्रीति से रहते।
इस अतिशय पूजत कलह, वैर ईर्ष्यादि दोष निश्चित टलते।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।24।।

ॐ ह्रीं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्-चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथिवी दर्पण तल सदृश स्वच्छ, अरु रत्नमयी हो जाती है।
जहं जहं प्रभु विहरण करते हैं, वह भूमि रम्य मन भाती है।।

तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।25।।

ॐ ह्रीं आदर्शतलप्रतिमारत्नमयीमही-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर मेघ कुमर सुरभित शीतल, जल कण की वर्षा करते हैं।
इंद्राज्ञा से सब देववृंद, प्रभु का अतिशय विस्तरते हैं।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।26।।

ॐ ह्रीं मेघकुमारकृतगंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शाली जौ आदिक धान्य भरित, खेती फल से झुक जाती है।
सब तरफ खेत हों हरे-भरे, यह महिमा सुखद सुहाती है।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।27।।

ॐ ह्रीं फलभारनम्रशालि-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्-चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जन मनपरमानन्द भरें, जहं जहं प्रभु विचरण करते हैं।
मुनिजन भी आत्म सुधा पीकर, क्रम से शिवरमणी वरते हैं।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।28।।

ॐ ह्रीं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायुकुमार जिन भक्तीरत, सुख शीतल पवन चलाते हैं।
जिन विहरण में अनुकूल पवन, उससे जन व्याधि नशाते हैं।।

तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।29।।

ॐ ह्रीं अनुकूलविहरणवायुत्व-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब कुँये सरोवर बावड़ियाँ, निर्मल जल से भर जाते हैं।
इस चमत्कार को देख भव्य, निज पुण्य कोष भर लाते हैं।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।30।।

ॐ ह्रीं निर्मलजलपूर्णकूपसरोवरादि-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश धूम्र उल्कादि रहित, अतिस्वच्छ शरदऋतु सम होता।
जिनवर भक्ती वन्दन करते, भविजन मन भी निर्मल होता।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।31।।

ॐ ह्रीं शरत्कालवन्निर्मलाकाश-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जन ही रोग शोक संकट, बाधाओं से छूट जाते हैं।
जहं जहं प्रभु विहरण करते हैं, सर्वोपद्रव टल जाते हैं।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।32।।

ॐ ह्रीं सर्वजनरोगशोकबाधारहितत्व-देवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायि-सम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेन्द्र चार दिश मस्तक पर, शुचि धर्मचक्र धारण करते।
उनमें हजार आरे अपनी, किरणों से अतिशय चमचमते।।
तीर्थंकर जिनका यह माहात्म्य, यह अतिशय सब सुखदायी है।
मैं पूजूँ रुचि से मुझको यह, परमानन्दामृतदायी है।।33।।

ॐ ह्रीं यक्षेन्द्रमस्तकोपरिस्थितधर्मचक्रचतुष्टयदेवोपनीतातिशयगुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिश विदिशा में छप्पन सुवर्ण, पंकज खिलते सुरभी करते।
इक पाद पीठ मंगल सुद्रव्य, पूजन सुद्रव्य सुरगण धरते।।
प्रभु के विहार में चरण तले, सुर स्वर्ण कमल रखते जाते।
इन तेरह सुरकृत अतिशय को, हम पूजत ही सम सुख पाते।।34।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरदेवचरणकमलतलस्वर्णकमलरचना-देवोपनीतातिशय-गुणमंडिताय अतिशायिसम्यक्चारित्रफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता छंद

वर प्रातिहार्य सु आठ में, तरुवर अशोक विराजता।
मरकत मणी के पत्र पुष्पों, से खिला अतिभासता।।
वृषभेश की ऊँचाई से, बारह गुणे तुंग फरहरे।
इस युत प्रभु की अर्चना, कर शोक सब मन का हरें।।35।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु शीश पर त्रय छत्र शोभें, मोतियों की हैं लरें।
प्रभु तीन जग के ईश हैं, यह सूचना करती फिरें।।
क्या चन्द्रमा नक्षत्रगण, को साथ ले भक्ती करें।
इस कल्पनायुत छत्रत्रययुत, की सदा अर्चा करें।।36।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल फटिक मणि से बना, बहुरत्न से चित्रित हुआ।
जिननाथ सिंहासन दिपे, निज तेज से नभ को छुआ।।
इस पीठ पर तीर्थेश, चतुरंगुल अधर ही राजते।
इस प्रातिहार्य समेत को, जन पूजते निज भासते।।37।।

ॐ ह्रीं सिंहासनमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर मुनीगण देव देवी, चक्रि नर पशु आदि सब।
निज निजी कोठे बैठ अंजलि, जोड़ते सुप्रसन्न मुख।।
इन बारहों गण से घिरे, वृषभेश त्रिभुवन सूर्य हैं।
इस प्रातिहार्य समेत जिनको, जजत जन जग सूर्य हैं।।38।।

ॐ ह्रीं द्वादशगणपरिवेष्टितमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभन-फलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आइये जिन शरण में, मानों कहे यह दुंदुभी।
सब देवगण मिलकर बजाते, बहुत बाजे दुंदुभी।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनको, वाद्य ध्वनि से पूजते।
सुरगण बजावें वाद्य उनके, सामने बहु भक्ति से।।39।।

ॐ ह्रीं देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगण गगन से कल्पतरु के, पुष्प बहु वर्षा करें।
यह वर्ण वर्ण सुगंध खिलते, पुष्प जन मन भा रहें।।
इस प्रातिहार्य समेत जितको, सुमन अर्घ्य लिये जजूँ।
अतिशय सुयश सुख प्राप्तकर, सब अशुभ अपयश से बचूँ।।40।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह कोटि भास्कर तेज हरता, 'प्रभामण्डल' नाथ का।
जन दर्श से निज सात भव को, देखते उसमें सदा।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनको पूजहूँ अतिचाव से।
निज आत्मतेज अपूर्व पाकर, छूटहूँ भव दाव से।।41।।

ॐ ह्रीं भामण्डलमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर यक्षगण चौसठ चंवर, जिनराज पर ढोरें सदा।
ये चन्द्रसम उज्ज्वल चंवर, हरते सभी मन की व्यथा।।

इस प्रातिहार्य समेत जिनको, पूजहूँ श्रद्धा धरे।
जो जजें चामर ढोरकर, वे उच्च पद के सुख भरें।।42।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरमहाप्रातिहार्यगुणमंडिताय वरप्रातिहार्यशोभनफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत चतुष्टय अर्घ्य

नाराच छंद

तीनलोक तीनकाल की समस्त वस्तु को।
एक साथ जानता अनंत ज्ञान विश्व को।।
जो अनन्तज्ञान युक्त इन्द्र अर्चते जिन्हें।
पूजहूँ सदा उन्हें अनन्तज्ञान हेतु मैं।।43।।

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानगुणसमन्विताय तथैवफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक औ अलोक के समस्त ही पदार्थ को।
एक साथ देखता अनन्त दर्श सर्व को।।
जो अनन्त दर्श युक्त इन्द्र अर्चते उन्हें।
पूजहूँ सदा उन्हें अनन्त दर्श हेतु मैं।।44।।

ॐ ह्रीं अनंतदर्शनगुणसमन्विताय तथैवफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाधहीन जो अनन्त सौख्य भोगते सदा।
हो भले अनन्तकाल आवते न ह्यां कदा।।
वे अनन्त सौख्य युक्त इन्द्र अर्चते उन्हें।
पूजहूँ सदा तिन्हें अनन्त सौख्य हेतु मैं।।45।।

ॐ ह्रीं अनंतसौख्यगुणसमन्विताय तथैवफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अनन्त वीर्यवान अंतराय को हने।
तिष्ठते अनन्तकाल श्रम नहीं कभी उन्हें।।

जो अनन्त शक्ति युक्त इन्द्र अर्चते उन्हें।
पूजहूँ सदा तिन्हें अनन्तवीर्य हेतु मैं।।46।।

ॐ ह्रीं अनंतवीर्यगुणसमन्विताय तथैवफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य–शंभु छंद

दश अतिशय जन्म समय से ग्यारह, केवलज्ञान उदय से हों।
देवों कृत तेरह अतिशय हों, चौंतिस अतिशय सब मिलके हों।।
वर प्रातिहार्य हैं आठ कहें, आनंत्य चतुष्टय चार कहें।
ये छयालिस गुण वृषभेश्वर के, हम पूजें वांछित सर्व लहें।।47।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशत्गुणसमन्वितायसर्वातिशायिफलप्रदाय श्रीऋषभदेव-तीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

द्वितीय कोष्ठक पूजा

अट्ठारह दोष रहित के अर्घ्य

–सोरठा–

दोष अनंतानंत, त्रिभुवन जनमें व्याप्त हैं।
आप किया उन अंत, कुसुमांजलि से पूजहूँ।।1।।

अथ मण्डलस्योपरि द्वितीयकोष्ठकस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

भुजंगप्रयात छंद

क्षुधा व्याधि पीड़ा करे सर्व जन को।
ये आहार संज्ञा हरें घातिहर जो।।
प्रभो केवली के असाता उदय भी।
फलें सौख्य में मैं जजूँ नित उन्हें ही।।1।।

ॐ ह्रीं क्षुधामहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृषा वेदना से पिपासित सभी हैं।
प्रभो आपने स्वात्म अमृत पिया है।।
इसे नाशने हेतु प्रभु को जजूँ मैं।
सदा साम्य पीयूष रुचि से चखूँ मैं।।2।।

ॐ ह्रीं तृषामहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महा दोष भीती सभी को सतावे।
प्रभू ने सभी भय डराकर भगाये।।
जजूँ सात भय नाश हेतू तुम्हीं को।
भजूँ सात उत्तम पर स्थान ही को।।3।।

ॐ ह्रीं भयमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाक्रोध अग्नी दहे सर्व जग को।
प्रभू ने महाशांति से नाशा उसको।।
इसी क्रोध आश्रित सभी दोष आते।
जजूँ आपको क्रोध को मूल नाशें।।4।।

ॐ ह्रीं क्रोधमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिता से अधिक दुःख चिन्ता करे है।
तनू स्वास्थ्य को हर महा दुख भरे है।।
इसे मूल से आपने नष्ट कीना।
जजूँ मैं न चिन्ता कभी हो हृदय मा।।5।।

ॐ ह्रीं चिंतामहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जरा जर्जरी देह करके सुखावे।
इसे नाशकर मूल से सौख्य पावें।।

प्रभो केवली आपको ही जजूँ मैं।
इसे नाश के स्वात्म सुख को भजूँ मैं।।6।।

ॐ ह्रीं जरामहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा राग संसार में ही भ्रमावे।
प्रभो आपमें राग मुक्ती दिलावे।।
तथापी तुम्हीं ने सभी राग नाशे।
जजूँ भक्ति से तो अशुभ राग भागे।।7।।

ॐ ह्रीं रागमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महा मोह सम्राट् से सब दुःखी हैं।
इसे मूल से प्रभु उखाड़ा सुखी हैं।।
इसी मोह को नाश हेतू जजूँ मैं।
महा ध्वांत हर ज्ञान ज्योती भजूँ मैं।।8।।

ॐ ह्रीं मोहमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करोड़ों भरे रोग इस देह में हैं।
प्रभू रोग को नाश करके सुखी हैं।।
विविध भांति के रोग नित कष्ट देते।
तुम्हें पूजते ये मुझे छोड़ देते।।9।।

ॐ ह्रीं रोगमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामल्ल मृत्यू ने त्रैलोक्य जीता।
इसे जीत तुम मुक्ति लक्ष्मी गृहीता।।
जजें आपको सर्व दुख के जयी हों।
वही लोक में शीघ्र मृत्युंजयी हो।।10।।

ॐ ह्रीं मृत्युमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पसीना न तन में प्रभू आपके हो।
प्रभो केवली आपके ये नहीं हो।।
इसे मूल से जो हरें वीतरागी।
उन्हीं को जजूँ मैं बनूँ सौख्यभागी।।11।।

ॐ ह्रीं स्वेदमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! एक क्षण में त्रयी लोक लोका।
नहीं खेद श्रम रंच भी आपको था।।
विषादो महादोष जीता तुम्हीं ने।
नशे दोष मेरा जजूँ अर्घ से मैं।।12।।

ॐ ह्रीं विषादमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामद कहें आठविध या असंख्ये।
उन्हीं से लहें नीचगति जीव सब ये।।
हरें मान उनको सभी इन्द्र वंदे।
जजूँ आपको सर्व मद को विखंडे।।13।।

ॐ ह्रीं मदमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रती दोष से प्रीति हो इष्ट पर में।
इसे नाश निज में धरी प्रीति प्रभु ने।।
प्रभू केवली प्रीति नाहीं किसी में।
तथापी जगत् हित करो नित जजूँ मैं।।14।।

ॐ ह्रीं रतिमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुतूहलमयी विश्व को देख करके।
करें जो तिविस्मय हरें पूर्ण सुख वे।।
सभी कर्मकृत फेर आश्चर्य कैसा।।
जजूँ भक्ति से सौख्य हो आप जैसा।।15।।

ॐ ह्रीं विस्मयमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेव-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो निद्रा के वश वो स्वयं को न देखें।
निजातम दरश पूर्ण को रोक ले ये।।
इसे नष्टकर सर्व जग को विलोका।
जजूँ मैं दरश प्राप्त होवे प्रभू का।।16।।

ॐ ह्रीं निद्रामहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंतों दफे जन्म धर-धर दुःखी मैं।
न हो जन्म फिर से करूँ यत्न वो मैं।।
तुम्हीं ने पुनर्जन्म नाशा जगत में।
अतः पूजहूँ तुम चरण नाथ अब मैं।।17।।

ॐ ह्रीं जन्ममहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरति दोष से आकुलित चित्त होवे।
इसे नाशकर आपने कर्म धोए।।
यही दोष मुझको सदा दुःख देता।
जजूँ आपको ये भगे शीघ्र भीता।।18।।

ॐ ह्रीं अरतिमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य–शंभु छंद

इन दोष अठारह ने जग में, सबको दुःख देकर वश्य किया।
इनसे बच सका नहीं कोई, इन त्रिभुवन में अधिपत्य किया।।
जो इनको जीते वे 'जिनेन्द्र', सौ इन्द्रों से वंदित जग में।
मैं पूजूँ उनको अर्घ्य चढ़ा, हर दोष भरें गुण वे मुझमें।।19।।

ॐ ह्रीं अष्टादशमहादोषरहिताय तथैवदोषनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

तृतीय कोष्ठक पूजा

अड़तालिसविध संकट निवारक 48 अर्घ्य

दोहा

वर्तमान के बहुत विध, कष्ट स्वयं हो दूर।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले सौख्य भरपूर।।1।।

अथ तृतीयकोष्ठकस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शेर छंद

जब मेघ अतीवृष्टि से भूजलमयी करें।
नदियों की बाढ़ में बहें जन डूबकर मरें।।
जो भक्त आप पूजतें वे पुण्य योग से।
अतिवृष्टि अपने देश से वे दूर कर सकें।।1।।

ॐ ह्रीं अतिवृष्टिउपद्रवनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहिं मेघ बरसते सभी जल के लिये तरसें।
पशु पक्षी मनुज प्यास से निज प्राण को तजें।।
ऐसे समय में आप की पूजा ही मेघ सम।
अमृतमयी जलवृष्टि से तर्पित करें जन मन।।2।।

ॐ ह्रीं अनावृष्टिउपद्रवनाशनसमर्थाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्भिक्ष हो अकाल हो असमय में जन मरें।
भगवन्! तुम्हारी भक्ति से जन पाप परिहरें।।
होवे सुभिक्ष सब तरफ जब पुण्य घट भरें।
तब मेघ भी समय समय वर्षा सुखद करें।।3।।

ॐ ह्रीं दुर्भिक्षोपद्रवनाशनकराय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन से भरी तिजोरियाँ ताले लगा दिये।
डाकू लुटेरे चोर आये लूट ले गये।।

बहु श्रम से कमाया गया धन हानि जो होती।
प्रभु भक्ति से हानी न हो धन रक्षणा होती।।4।।

ॐ ह्रीं चोरलुंटाकादिउपद्रवनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो राज्यकर के हेतु ही अधिकारी राज्य के।
छापा या टैक्स आदि से धन लूट ले जाते।।
इस विध से राज्य भय से घिरें निर्धनी बनें।
प्रभु के चरणकमल भजें फिर से धनी बनें।।5।।

ॐ ह्रीं आयकरादिराज्यभयोपद्रवनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना प्रकार श्रम करें फिर भी न धन बढ़े।
दारिद्र से उन सामने संकट बड़े बड़े।।
परिवार के पोषण में भी असमर्थ हो रहें।
वृषभेश की पूजा करें धन सम्पदा लहें।।6।।

ॐ ह्रीं दारिद्रदुःखविनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तनु में ज्वरादि रोग हो पीड़ाएँ हों घनी।
बहु औषधि लेते भी व्याधियाँ हो चौगुनी।।
भगवान ऋषभदेव की जो अर्चना करें।
ज्वर शूल आदि रोग को वे क्षण में परिहरें।।7।।

ॐ ह्रीं ज्वरशूलरोगादिनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब पीलिया कुष्ठादि जलोदर भगंदरा।
नाना प्रकार रोग शोक हों भयंकरा।।
तुम नाम के जपे समस्त रोग नष्ट हों।
हे नाथ! आप भक्ति से जन पूर्ण स्वस्थ हों।।8।।

ॐ ह्रीं कामलाकुष्ठजलोदरभगंदरादिव्याधिनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध के नेत्र रोग हों अंधा करें यदि।
औषधि व शल्य चिकित्सा से हो न लाभ भी।
ऐसे समय में जो मनुष्य प्रभु शरण गहें।
हो नेत्र ज्योति स्वच्छ मन प्रसन्नता लहें।।9।।

ॐ ह्रीं नानाविधनेत्ररोगविनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्राण को भी घातती कैंसर महाव्याधी।
अति कष्टदायि वेदना से हो न समाधी।।
तब भक्त आप मंत्र को जपते जो भाव से।
सब वेदना व व्याधि भी लगती हैं देह से।।10।।

ॐ ह्रीं प्राणघातिकैंसरमहाव्याधिविनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हृद् रोग से पीड़ित मनुज न पावते साता।
बहुधन करें खर्चा परन्तु बढ़ती असाता।।
जिनराज पादकमल की लेते यदी शरण।
हों पूर्ण स्वस्थ नहीं हो अकाल में मरण।।11।।

ॐ ह्रीं हृदयरोगपीड़ानिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनियों की जो निन्दा करें घृणा करें कभी।
वे हों कुरूप निंद्यरूप पावते तभी।।
मन में सदा दुःखी रहें यदि आप को यजें।
होवें सुरूप कामदेव सर्वसुख भजें।।12।।

ॐ ह्रीं कुरूपादिकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छन्द

स्त्री पुत्रादि स्वजन परिजन, जो अपने को अतिप्रिय होवें।
वे दूर बसें या मर जावें, तब इष्ट वियोग दुःखद होवे।।

उस समय चित्त संतप्त किये रोते विलाप करते प्राणी।
होते प्रसन्न क्षण भर में ही यदि मिल जावे प्रभु की वाणी।।13।।

ॐ ह्रीं प्राणघातकइष्टवियोगजदुःखनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रु हों या प्रतिकूल स्वजन भार्या आदिक शत्रूसम हों।
इनका वियोग कैसे होवे ऐसी चिन्ता प्रतिक्षण मन हो।।
ऐसे अनिष्ट संयोगों से संतप्त हृदय प्रतिदिन रोवे।
जिनवर की पूजा करने से निश्चिन्त प्रसन्नमना होवें।।14।।

ॐ ह्रीं अनिष्टसंयोगमहादुःखशातनाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घर में या व्यापारों में भी मन के प्रतिकूल क्रियायें हों।
मानस पीड़ा होवे प्रतिदिन आकुलता हो व्याकुलता हो।।
प्रतिक्षण मनपीड़ा से तनु में, नानाविध रोग प्रगटता हो।
प्रभु की पूजा से आधि नशे, मन में अतिशय प्रफुल्लता हो।।15।।

ॐ ह्रीं सर्वमानसिकताविनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनों से प्रिय भी वचन कहें फिर भी जन-जन अति क्रोध करें।
या जिह्वा में हो रोग विविध या गूँगे हों बहु दुःख भरें।।
इस विधि वाचनिक कष्ट जो भी नश जाते प्रभुवर भक्ती से।
वचसिद्धि मिले सब जन वश हों, पूजा का फल मिलता विधि से।।16।।

ॐ ह्रीं सर्ववाचनिककष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुद्गल के परमाणु से निर्मित है काया अस्थिर है।
फिर भी इसमें कुछ पीड़ा हो आत्मा भी होता अस्थिर है।।
नानाविध कायिक कष्टों से छुटकारा पाते भाक्तिक जन।
हे नाथ! आपकी पूजा से सब मिट जाते जग के क्रन्दन।।17।।

ॐ ह्रीं नानाविधकायिककष्टशातनाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो वायुयान से गगन गमन करते ऊपर में उड़ जाते।
यदि अकस्मात् दुर्घटना हो ऊपर से नीचे गिर जाते।।
प्रभु नाम जपें तत्क्षण ही तब तनु में किंचित् नहीं चोट लगे।
मरणान्तक पीड़ा से बचते, दीर्घायु हों दुःख दूर भगें।।18।।

ॐ ह्रीं सर्ववायुयानदुर्घटनाकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो रेल में बैठे अतिशीघ्र बहुतेक कोश यात्रा करते।
यदि एक्सीडेंट आदि होवे तो आकस्मिक मृत्यु लभते।।
जिनराज भक्ति का ही प्रभाव ऐसी बहुविध दुर्घटनाओं में।
परिपूर्ण सुरक्षित बच जाते, या एक्सीडेंट टलें क्षण में।।19।।

ॐ ह्रीं सर्वलोहपथगामिनीदुर्घटनादिभयनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बस कार आदि यात्रा साधन सुख देते आज सभी को भी।
संघट्टन आदि बहुत विध की दुर्घटनाएँ होती हैं फिर भी।।
यदि नाम मंत्र जपते उस क्षण दुर्घटना से बच जाते हैं।
यदि मरें कदाचित् फिर भी वे शुभ स्वर्ग सौख्य पा जाते हैं।।20।।

ॐ ह्रीं सर्वचतुष्चक्रिकादुर्घटनादिसंकटमोचनाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो चलें तिपहिए, वाहनादि, उनके संघट्टन आदि विविध।
गिरने पड़ने से एक्सीडेंट, आदिक दुर्घटनाओं से नित।।
नाना आतंक दिखें जग में, प्रभु भक्ती से टल जाते हैं।
सब विध अकालमृत्यु टलती, भाक्तिक दुःख से बच जाते हैं।

ॐ ह्रीं सर्वत्रिचक्रिकादुर्घटनादिकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दो पहिये के साइकिल आदिक, वाहन से चलते अकस्मात्।
बस ट्रक आदिक के टक्कर से, गिर जाते बहुविध कष्टप्राप्त।।

प्रभु नाम मंत्र के जपते ही, किंचित् नहिं चोट लगे तन में।
अपमृत्यु आदि भय टल जाते, मानव दीर्घायु हों जग में।।22।।

ॐ ह्रीं सर्वद्विचक्रिकादुर्घटनांतकनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू पर कंप कभी होता, बहुतेक मनुज मर जाते हैं।
घर ग्राम आदि भी नश जाते, बहुते पशु भी मर जाते हैं।।
प्राकृतिक कोप भूकम्प आदि दुर्घटनाएँ भी टल जाती हैं।
जो भक्त आपको जजते हैं, उनकी रक्षा हो जाती है।।23।।

ॐ ह्रीं भूकम्पदुर्घटनानिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नदियों में बाढ़ यदि आवे, कितने ही ग्राम डूब जाते।
कितने नर नारी पशु पक्षी, जल में डूबे तब मर जाते।।
इन आकस्मिक जल संकट से, भाक्तिक जन ही बच सकते हैं।
जिनदेवदेव का ही प्रभाव, ये संकट भी टल सकते हैं।।24।।

ॐ ह्रीं नदीपूरप्रवाहसंकटमोचनाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नदी, समुद्र, नहर आदिक, में अकस्मात् गिर जाते हैं।
तुम नाम मंत्र जपते तत्क्षण, वे सहसा ही तिर जाते हैं।।
जिनदेव भक्ति की महिमा ही, भवसागर भी तिर सकते हैं।
प्रभु आदीश्वर की भक्ति से, हम भी सब संकट हरते हैं।।25।।

ॐ ह्रीं नदीसमुद्रादिपतनकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिच्छू आदिक विषधर जंतु, सर्पादिक काले नाग यदी।
हालाहल विष उगले डस लें, नहिं बचा सकें कोई वैद्य यदी।।
ऐसे भय यदी भयंकर भी, जीवन नाशक आ जाते हैं।
आदीश्वर जिनकी भक्ती से, निर्विष हो जीवन पाते हैं।।26।।

ॐ ह्रीं वृश्चिकसर्पादिविषधरविषनिर्णाशनाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टापद व्याघ्र सिंह आदिक, हिंसक पशुओं ने घेरा हो।
जीवन बचने की आश न हो, संकट का घोर अंधेरा हो।।
भय से भयभीत हुए प्राणी, यदि नाममंत्र प्रभु का जप लें।
तत्क्षण ही क्रूर जन्तुगण भी, शांती भावों से मिलें जुलें।।27।।

ॐ ह्रीं अष्टापदव्याघ्रसिंहादिक्रूरहिंसकजंतुभयनिवारकाय श्रीऋषभदेव-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हाथी, घोड़े, गौ, बैल आदि पशुगण यदि हमला करते हैं।
सींगों वाले भयभीत करें, दौड़ें मारें वध करते हैं।।
ऐसे प्राणीगण से भी नर, नहिं बाधा किंचित् पाते हैं।
जो मन में चिंते नाममंत्र, वे निर्भय हो बच जाते हैं।।28।।

ॐ ह्रीं गजाश्वगोवृषभादिप्राणिगणभयविनाशकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाराच छंद

जो विषाक्त गैस फैलती शरीर नाशती।
मानवों पशुगणों के प्राण को संहारती।।
श्री जिनेन्द्रदेव के पदाब्ज की समर्चना।
सर्वगैस आदि कष्ट दूर होयं रंच मा।।29।।

ॐ ह्रीं विषाक्तवाष्पक्षरणादिसंकटवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आज जो रसोईघर में गैसपात्र जल रहे।
जो कभी फटें व अग्नि से अनेक को दहें।।
प्राण कष्टदायि चुल्लिकादि दुःख वारते।
जो जिनेन्द्र को जजें समस्त पाप टारते।।30।।

ॐ ह्रीं वाष्पचुल्लिकादिदुर्घटनाकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आज बम फटें कहीं अनेक प्राणी मारते।
उग्रवादि लोग भी अनेक को संहारते।।

ग्राम सद्म भी बड़े बड़े हि बम गिरे नशें।
आप पाद पूजते समस्त आपदा नशें।।31।।

ॐ ह्रीं बमविस्फोटकादिआकस्मिकसंकटनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आज जो दहेज की प्रथा महान् घातिनी।
बालिकाओं का जनम हुआ है कष्ट की खनी।।
भारभूत जन्म भी सुधन्य धन्य लोक में।
आप नाम के जपे अपूर्व सौख्य दे घने।।33।।

ॐ ह्रीं बालिकाजन्मकष्टनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानसीक कष्ट देह व्याधि आदि दुःख से।
कूप में गिरें विषादि खाय के मरा चहें।।
तुच्छयोनि हेतु आत्मघात है सुबुद्धि हो।
आप नाम के जपे हि पूर्ण आयु लाभ हो।।34।।

ॐ ह्रीं कूपनदीपतनविषादिभक्षणनिमित्तापघातभावनिवारणाय श्रीऋषभदेव-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मृत्यु हो अकाल में न पूर्ण आयु पा सकें।
कर्म की उदीरणा से बहुविधे निमित्त बनें।।
नाथ पाद को जजें अपूर्व पुण्य को भरें।
दीर्घ आयु हो यहाँ समस्त कष्ट को हरें।।35।।

ॐ ह्रीं नानाविधदुर्घटनादिअकालमृत्युनिवारणाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत औ पिशाच व्यंतरादि कष्ट दें घने।
डाकिनी व शाकिनी ग्रहादि भी निमित बनें।।
दुःख हो पिशाचग्रस्त आप वश्य ना रहें।
नाथ पाद पूजते समस्त कष्ट को दहें।।36।।

ॐ ह्रीं भूतपिशाचव्यंतरादिबाधानिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबोल छन्द

किंचित् श्रम से धन ही धन हो, सब व्यापार सफल होते।
पुण्य उदय से हों उद्योगपती, सब जन के प्रिय होते।।
जिनपूजा का ही माहात्म्य, जो धन से घर भण्डार भरें।
भात्तिक जन प्रभु पूजा कर, शीघ्र स्वात्मनिधि प्राप्त करें।।37।।

ॐ ह्रीं बहुविधव्यापारसफलताकारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गृहलक्ष्मी अनुकूल रहे, पतिव्रत से घर को मोहे।
पति की अनुगामी बन करके, दान धर्म से नित सोहे।।
ऐसी पत्नी मिलती जिसको, वे पुण्यात्मा कहलाते।
ऋषभदेव की पूजा का फल, इस भव परभव में पाते।।38।।

ॐ ह्रीं उभयकुलकमलविकासिनी धर्मपत्नीप्रापकपुण्यप्रदायकाय श्रीऋषभदेव-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुत्र पौत्र संतति मिलती नित, कुलदीपक संतान मिले।
मात पिता की कीर्ति बढ़ाकर, धर्मनिष्ठ हों स्वस्थ भले।।
भरत, बाहुबलि, राम सदृश सुत, ब्राह्मी सीता सम कन्या।
ऋषभदेव तीर्थंकर को नित, पूजत पाते जगवंद्या।।39।।

ॐ ह्रीं पुत्रपौत्रादिकुलदीपकसंततिप्रापकपुण्यदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीर्घ आयु पाते वे भविजन, जो प्रभु चरण कमल जजते।
अशुभ भाव से दूर रहें नित, जिनवर के गुण में रमते।।
मनुज देव योनी को पाते, सम्यग्दर्शन महिमा से।
अतः जजूँ मैं भक्तिभाव से, उत्तम आयु मिले जिससे।।40।।

ॐ ह्रीं दीर्घायुप्रापकपुण्यप्रदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों ओर फैलती कीर्ती, सद्गुण से निज को भरते।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित से, आत्मा को शोभित करते।।

कई जन्म से पुण्य योग से, ऐसा योग सुलभ होवे।
ऋषभदेव की पूजा करते, यश सौरभ प्रसरित होवे।।41।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्कीर्तिसौरभव्यापकपुण्यप्रापकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राज्यमान्यता प्राप्त करें सब, जन जन के अति प्रिय होते।
सब जन उनके गुण गाते ऐसी महिमा से खुश होते।।
जिनवर भक्ती का प्रभाव यह, सब जन संतर्पित करते।
और अधिक क्या जिनभक्ती से तीर्थंकर भी बन सकते।।42।।

ॐ ह्रीं राज्यमान्यतादिप्रशंसनगुणप्रापकपुण्यदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन जन भी आज्ञा पालें, ऐसी गरिमा को पाते हैं।
इस भव में इन्द्रादि सदृश, अतिशायी वैभव पाते हैं।।
ये सब ऋषभदेव पूजन का, उत्तम फल जग में माना।
भक्त बने भगवान स्वयं, ऐसा आश्चर्य जगत् जाना।।43।।

ॐ ह्रीं आज्ञापालनविभवप्रदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंत समय में रोग वेदना, आर्तरौद्र दुर्ध्यान न हों।
क्रोध मान माया लोभादिक, राग द्वेष दुर्भाव न हों।।
देव शास्त्र गुरु पंचपरम गुरु, इनका ही बस ध्यान प्रभो।
महामंत्र का मनन श्रवण हो, अंत समाधी मरण प्रभो।।44।।

ॐ ह्रीं अन्त्यसमाधीमरणफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण ये, रत्नत्रय शिवदाता हैं।
निश्चय औ व्यवहार मार्ग ये, परमानन्द विधाता हैं।।
ऋषभदेव तीर्थंकर प्रभु की, भक्ति करें जो भव्य सदा।
वे ही तीन रत्न पा लेते, त्रिभुवन लक्ष्मी लें सुखदा।।45।।

ॐ ह्रीं व्यवहारनिश्चयरत्नत्रयप्रदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षमा सुमार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप भी।
त्याग अकिंचन ब्रह्मचर्य ये, दशवर धर्मधरें यति ही।।
इन धर्मों को पाते वे ही, जो जिनपूजा नित करते।
ऋषभदेव के चरणकमल की, भक्ति से शिवपद लभते।।46।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मप्रदायकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शविशुद्धी विनय आदि, सोलह सुभावना मानी हैं।
तीर्थंकर पद की जननी ये, सर्वश्रेष्ठ जिनवाणी हैं।।
तीर्थंकर पदकमल चर्चते, सदा भावना भाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृती को बांधे, त्रिभुवनपति बन जाते हैं।।47।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिसोलहकारणभावनाफलप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहिरात्मा अन्तरआत्मा परमात्मा जीव त्रिविध मानें।
स्वपर भेदविज्ञानी मुनिवर, शुद्धात्मा को पहचानें।।
सतत ध्यान कर शुद्ध बनें वे, जो जिनचरणकमल षट्पद।
निजशुद्धात्मतत्त्वप्राप्ती हितु, मैं भी नित्य जजूँ जिनपद।।48।।

ॐ ह्रीं अन्तरात्मस्वरूपनिजशुद्धात्मध्यानकारिपदप्रदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छंद

अतिवृष्टि अनावृष्ट्यादि कष्ट, जो मानव को दुःख देते हैं।
श्रीऋषभदेव की पूजा से, भविजन सब दुःख को मेटे हैं।।
नीरोग बनें दीर्घायु हों, सब सुख सम्पति भर लेते हैं।
यह जिनपूजन का ही प्रभाव, बहुयश सौरभ को देते हैं।।49।।

ॐ ह्रीं अतिवृष्टिअनावृष्ट्यादि विविधसंकटनिवारकाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ कोष्ठक पूजा

चौरासी गणधर गुरुसेवित 84 अर्घ्य

दोहा

गणधर गुरु से वंद्य नित, तीर्थंकर वृषभेश।
पुष्पांजलि से पूजते, नशते विघ्न अशेष।।

अथ मण्डलस्योपरि चतुर्थकोष्ठकस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभु छंद

श्री ऋषभदेव के तृतीय पुत्र, मां यशस्वती के नंदन हो।
तज पुरिमतालपुर नगर राज्य, मुनि बने जगत अभिनन्दन हो।।
सब ऋद्धि समन्वित गणधर गुरु, हे 'ऋषभसेन' तुमको वंदन।
तुम प्रथम तीर्थंकर के पहले, गणधर हम करते नित्य यजन।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभसेनगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीकुंभ' गणीश्वर द्वादशगण, के प्रमुख नाथ के गुण गाते।
सब गुणरत्नों से भरित आप, नित आत्म सुधारस आस्वादें।।
सब विघ्न विनाशें भक्तों के, इसलिये भक्ति से हम पूजें।
गणधरगुरु से वंदित प्रभु की, पूजा कर भवदुख से छूटें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंभगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्री दृढ़रथ' गणधर ऋषभदेव के समवसरण के षट्पद हो।
भक्ती से निजपरमानंदामृत पीते आप तृप्ति युत हो।।
सम्पूर्ण शास्त्र के ज्ञाता हो, फिर भी जिनवर के दास बने।
हम पूजें ऋषभदेव जिनको, पूरे हों वांछित कार्य घने।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीदृढ़रथगणधरगुरुसेवितांघ्रियुगलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्री शतधनु' गणधर सप्त ऋद्धि-धारी श्रुत वारिधि पारंगत।
निज शुद्ध बुद्ध परमात्मतत्त्व, ध्याते फिर भी प्रभु गुण में रत।।
उन प्रभु आदीश्वर के गुण को, मैं भी गाऊँ नित भक्ति करूँ।
जल आदिक अर्घ्य चढ़ा करके, निज सम्यग्दर्शन शुद्धि करूँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीशतधनुगणधरगुरुसेवितपादपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीवृषभेश्वर के समवसरण, में कहे 'देवशर्मा' गणधर।
ये भक्त जनों के कष्ट हरें, इनको जो पूजें रुचि धरकर।।
इनसे वंदित चरणकमल जिन, उन प्रभु को अर्चूं श्रद्धा से।
श्रीऋषभदेव जिनराज शरण, जो पावें छूटें विपदा से।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीदेवशर्मागणधरगुरुवंदितांघ्रियुगलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीदेवभाव' गणधर स्वामी, मनपर्ययज्ञानी जगत्राता।
व्यवहार रत्नत्रय के बल से, निश्चय रत्नत्रय को साधा।।
श्रीऋषभदेव सा गुरु पाया, निज ज्ञानज्योति से आलोकित।
उन प्रभु के चरणकमल पूजूं, निज को पाऊँ निज से शोभित।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीदेवभावगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीनन्दन' गणधर गुरु को नित, बंदूँ आनन्दित होकर के।
वे ज्ञानानन्द स्वभावी थे, प्रतिक्षण आत्मा को ध्याकर के।।
वे ऋषभदेव के शिष्य बने, उस भव से ही शिवधाम लिया।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर के, गुरु के गुरु को शिर नमित किया।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दनगणधरगुरुसेवितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीसोमदत्त' गणधर गुणधर, सम्पूर्ण परिग्रह के त्यागी।
निज को निज में निज के द्वारा, नित ध्याते निजगुण अनुरागी।।

श्रीऋषभदेव के निकट रहें, अविरत जिनभक्ती में रत थे।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ा करके, मेरे भव-भव के फंद कटें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसोमदत्तगणधरगुरुनमितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीसूरदत्त' गणधर स्वामी, संयतमुनि नग्न दिगम्बर थे।
अट्ठाइस मूलगुणों से युत, बहुविध उत्तर गुणधारी थे।।
ये ऋषभदेव के चरणकमल, में नित नमते उनको वंदूँ।
गणधरगुरु को तीर्थंकर को, पूजत ही पापअरी खंडूँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसूरदत्तगणधरगुरुवंदितचरणारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीऋषभदेव के सन्निध में, गणधर गुरु 'वायूशर्मा' थे।
सब कर्म धूलि को उड़ा-उड़ा, अगणित गुणयुत शुचिधर्मा थे।।
संयमबल से त्रयविध अवधी, पाकर निरवधि गुण रत्नाकर।
उनको उनके गुरु को पूजूँ, पा जाऊँ अनवधि सुखसागर।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीवायुशर्मागणधरगुरुपूजितांघ्रियुगलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीयशोबाहु' गणधर गुणधर, निजगुण के यश को फैलाया।
जिसमें धर्मामृत भरा हुआ, इस अतुल तीर्थ में नहलाया।।
भाक्तिक जन इसमें नहा नहा, निज पाप मलों को धोते थे।
उन तीर्थ तीर्थंकर को यजते, सब वांछित पूरे होते थे।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीयशोबाहुगणधरदेवाभिवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवाग्नी' गणधर ने तप बल, से सर्व ऋद्धियाँ पाई थीं।
ध्यानानल में सब कर्म जला, कर सर्वसिद्धियाँ पायी थीं।।
श्रीऋषभदेव के चरणकमल, के भ्रमर बने थे जग त्राता।
उन गुरु को भगवत् चरणों को, मैं पूजूँ मिले सर्व साता।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीदेवाग्निगणधरगुरुचुंबितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छंद

बुद्धि ऋद्धि में अवधि ज्ञान है ऋद्धि जो।
अणु से महास्कंध पर्यंते मूर्त को।।
जाने गणधर 'अग्निदेव' सब ऋद्धियुत।
उनके गुरु को भी मैं पूजूँ सिद्धिकृत।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअग्निदेवगणधरगुरुपूजितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनुज लोक के भीतर चिंतित वस्तु को।
जाने मूर्तिक द्रव्य मनःपर्यय ज्ञान वो।।
इन ऋद्धीयुत 'अमितगुप्त' गणनाथ को।
उनके गुरु तीर्थंकर प्रभु को नित जजों।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअमितगुप्तगणधरदेववंदितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक प्रकाशे केवलज्ञान जो।
सब ऋद्धीयुत पाते जो इस ऋद्धि को।।
उन 'मित्राग्नी' गणधर को मैं नित जजूँ।
श्रीऋषभदेव को पूजूँ निज आतम भजूँ।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीमित्राग्निगणधरगुरुअभिनंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्द संख्यातों अर्थ अनंतों से युते।
अनंत लिंगों साथ बीजपद जानते।।
बीजऋद्धि युत भी 'हलभृत' गणनाथ हैं।
उनके गुरु तीर्थंकर त्रिभुवन नाथ हैं।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीहलभृतगणधरगुरुनमितचरणांभोजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्दरूप बीजों को मति से जो धरें।
मिश्रण बिन बुद्धी कोठे में जो भरें।।

गणधरदेव 'महीधर' जिनवर भक्त थे।
उनके गुरु तीर्थंकर प्रभु को हम जजें।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीमहीधरगणधरगुरुपूजितपादाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु उपदेश सुपाय एक पद को ग्रहें।
उसके ऊपर या पहले के पद लहें।।
उभय ग्रहें या त्रयविध पदानुसारिणी।
गुरु 'महेन्द्र' की जिनभक्ती भवहारिणी।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीमहेन्द्रगणधरगुरुचुंबितपादारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रोत्रेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाहिरे।
अक्षर अनक्षरात्मक वच सुन उत्तरें।।
गुरु 'वसुदेव' संभिन्नश्रोतृ ऋद्धि धरें।
उनके गुरु तीर्थंकर के गुण उच्चरें।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीवसुदेवगणधरगुरुनमितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रसनेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य जो।
संख्यातों योजन नाना रस स्वाद को।।
जो जाने दूरास्वादन ऋद्धी धरें।
देव 'वसुंधर' जिनभक्ती से भव तरें।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीवसुंधरगणधरगुरुनमितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्शेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य भी।
संख्यातों योजन स्पर्श को जानहीं।
'अचलगुरु' दूरस्पर्श ऋद्धि आदिक सहित।
उनके गुरु ऋषभेश्वर हैं त्रिभुवन महित।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलगणधरगुरुमहितचरणजलजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य भी।
संख्यातों योजन सुगंध को जान हीं।।
'मेरू' गणधर दूरघ्राण ऋद्धी धरें।
उनके गुरु को पूजत हम समसुख भरें।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीमेरूगणधरगुरुवंदितपादसरोरुहाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्णेन्द्रिय उत्कृष्ट विषय के बाहिरे।
संख्यातों योजन मनुष्य पशु अक्षरे।।
पृथक्-पृथक् सुन लेय 'मेरुधन' गणधरा।
उनके गुरु को जजूँ सदा वे सुखकरा।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीमेरूधनगणधरगुरुवंदितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र से बाह्य जो।
चक्रवर्ति के नेत्रविषय से अधिक वो।।
दूरदर्शिता ऋद्धि 'मेरुभूती' धरें।
तीर्थंकर के चरणकमल में नति करें।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीमेरुभूतिगणधरगुरुनमितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरेन्द्र छंद

रोहिणी प्रभृति महाविद्यायें, पाँच शतक मानी हैं।
लघु विद्या अंगुष्ठप्रसेना प्रभृति सप्तशत ही हैं।।
दशम पूर्व पढ़ने पर च्युत नहिं दशपूर्वित्व कहाते।
गुरु 'सर्वयश' ऋषभेश्वर के गुणयश को नित गाते।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वयशगणधरगुरुपूजितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह अंग चतुर्दश पूरब पढ़कर श्रुतकेवलि हों।
ऋद्धि चतुर्दशपूर्वि धरें नित 'सर्वयज्ञ' गणधर वो।।

ऋषभदेव के समवसरण में धर्मध्यान के ध्यानी।
उनको उनके गुरु को पूजूँ बनूँ आत्म श्रद्धानी।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वयज्ञगणधरगुरुवंदितचरणारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभ्र भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण चिन्ह स्वपन हों।
आठ निमित्तों से सब के शुभ अशुभ बताते मुनि जो।।
वे अष्टांगनिमित्त ऋद्धिधर 'सर्वगुप्त' गणधर गुरु।
ऋषभदेव की भक्ती में रत नमूँ नमूँ मैं रुचिधर।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वगुप्तगणधरगुरुवंदितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औत्पत्तिक पारिणामिक विनयिक कही कर्मजा बुद्धी।
प्रज्ञाश्रमण ऋद्धि चउविधधर गणधर गुरु बनतेभी।।
नाम 'सर्वप्रिय' ऋषभदेव के शिष्य सर्वजग त्राता।
जजूँ तीर्थंकर चरणकमल को पाऊँ निजसुख साता।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वप्रियगणधरगुरुनमितपादाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु उपदेश बिना कर्मों के, उपशम से तप बल से।
जो प्रत्येक बुद्धि ऋद्धी है, ऋषियों के ही प्रगटे।।
'सर्वदेव' गणधर गुरुवर इस ऋद्धि सहित सुखकारी।
उनके गुरु ऋषभेश्वर को मैं, पूजूँ भवदुखहारी।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वदेवगणधरगुरुपूजितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब परमत को सुरपति को भी जो कर सकें निरुत्तर।
इन वादित्वऋद्धियुत गणधर को वंदूँ अंजलिकर।।
'सर्वविजय' से वंदित जिनवर चरणकमल शिर नाऊँ।
गणधरगुरु को तीर्थंकर को जजत आत्मसुख पाऊँ।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वविजयगणधरगुरुसेवितपादपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणू बराबर छिद्रों में भी, जो ऋषि घुस कर बैठें।
चक्रवर्ति का कटक बना दें अद्भुत विक्रिय करके।।
ऐसे अणिमा ऋद्धि विभूषित 'विजयगुप्त' गणधरको।
नमूँ इन्हों के गुरु तीर्थंकर जजूँ स्वात्मसुख झट हो।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयगुप्तगणधरगुरुपूजितपादाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु बराबर तनु कर सकते महिमाऋद्धि धरें जो।
विक्रिय ऋद्धी के बल से गुरु पर उपकार करें वो।।
'विजयमित्र' गणधर गुरु इन सब ऋद्धि समन्वित माने।
उनको उनके गुरु को पूजत कर्म कालिमा हाने।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमित्रगणधरगुरुचुंबितपादारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघिमा ऋद्धि सहित ऋषि वायूसम हल्का तनु कर सकते।
जन जन के उपकार हेतु ही, ऋद्धि प्रयोगें रुचि से।।
'श्रीविजयिल' गणधर गुरु ऐसे उनके चरण नमूँ मैं।
श्रीऋषभेश्वर को नित पूजूँ आतम सौख्य भरूँ मैं।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयिलगणधरगुरुवंदितांघ्रियुगलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अपराजित' गणधर प्रभु जग में सदा विजयशाली थे।
अधिक भारयुत वज्रसदृश तनु तप बल से धर सकते।।
गरिमा ऋद्धि सहित को वंदूँ तपमहिमा की गरिमा।
वंदूँ ऋषभदेव तीर्थंकर पाऊँ तप की महिमा।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीअपराजितगणधरगुरुवंदितपादारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि पर बैठे ही बैठे, सूर्य चंद्र छू सकते।
अंगुलि से ही मेरुशिखर, छूकर मस्तक से नमते।।

प्राप्तिनाम विक्रिया सहित 'वसुमित्र' गणाधिप वंदूँ।
तीर्थंकर श्रीआदिनाथ के शिष्यों को अभिनंदूँ।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीवसुमित्रगणधरगुरुनमितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू पर भी जलसम अवगाहे जल में भू सम चलते।
इस प्राकाम्यविक्रिया बल से अद्भुत महिमा धरते।।
'विश्वसेन' गणधर को वंदूँ नाना ऋद्धि सहित जो।
आदिनाथ के चरणकमल के भ्रमर भक्ति तत्पर वो।।36।।

ॐ ह्रीं श्रीविश्वसेनगणधरगुरुचुंबितचरणांबुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोला छंद

जग में प्रभुता वृद्धि यह ईशित्व कहावे।
'साधुषेण' के सिद्ध सब जन से यश पावें।।
उन गणधर से पूज्य ऋषभदेव तीर्थंकर।
जजूँ भक्ति से नित्य पाऊँ सौख्य निरन्तर।।37।।

ॐ ह्रीं श्रीसाधुषेणगणधरगुरुअर्चितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जन वश में होय, ऋद्धि वशित्व कहावे।
'सत्यदेव' गणदेव, नाना ऋद्धि धरावें।।
इनसे पूजित पाद, ऋषभदेव भगवंता।
करूँ निरन्तर जाप, पाऊँ सौख्य अनंता।।38।।

ॐ ह्रीं श्रीसत्यदेवगणधरगुरुपूजितांघ्रियुगलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके बल से शैल, शिला आदि के मधि से।
वृक्ष आदि में छेद, किये बिना ही चलते।।

विक्रिय अप्रतिघात, 'देवसत्य' गुण धरते।
ऋषभदेव के पास, रहें द्विदश गण धरते।।39।।

ॐ ह्रीं श्रीदेवसत्यगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धी से साधु, हों अदृश्य नहिं दिखते।
विक्रिय अंतर्धान, तप बल से ही उपजे।।
'सत्यगुप्त' गणनाथ, बहुविध ऋद्धी धारी।
उन गुरु आदिनाथ, जजूँ सर्वहितकारी।।40।।

ॐ ह्रीं श्रीसत्यगुप्तगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकहि साथ अनेक-रूप बना सकते जो।
कामरूप यह ऋद्धि, तप बल से प्रगटे जो।।
'सत्यमित्र' गणनाथ ऋषभदेव गुण गाते।
नमूँ नमाकर माथ, तीर्थंकर गुण गाके।।41।।

ॐ ह्रीं श्रीसत्यमित्रगणधरगुरुनमितपादपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धी से साधु, गगन गमन कर सकते।
धरें गगनगामित्व, 'निर्मल' मुनि तपबल से।।
इनके गुरु वृषभेश, उनको नित्य जजूँ मैं।
रोग, शोक, संक्लेश, सब दुःख दूर करूँ मैं।।42।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्मलगणधरगुरुवंदितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल में चलते जंतु-घात वहाँ नहिं होवे।
जलचारण यह ऋद्धि, तपश्चरण से होवे।।
'श्रीविनीत' गणधार, नमूँ, नमूँ चित लाके।
ऋषभदेव को माथ, नाऊँ अर्घ्य चढ़ाके।।43।।

ॐ ह्रीं श्रीविनीतगणधरगुरुवंदितचरणाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउ अंगुल भू उपरि, चलते अधर गगन में।
जंघाचारण ऋद्धि, धरते समवसरण में।।
'संवर' गणधर देव, उनके गुरु आदीश्वर।
जजत करूँ दुखछेव, पाऊँ सुख क्षेमंकर।।44।।

ॐ ह्रीं श्रीसंवरगणधरगुरुनमितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फल पत्ते अरु फूल, उन पर चरण धरें भी।
चारणकिरिया ऋद्धि, जीवघात नहिं हो भी।।
'मुनीगुप्त' गणनाथ, वंदूँ व्याधि नशाऊँ।
नमूँ नमाकर माथ, ऋषभदेव गुण गाऊँ।।45।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिगुप्तगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि शिखा पर चलें, बाधा रंच न होवे।
धूयें पर भी चले, पग स्खलित न होवें।।
'मुनीदत्त' गणनाथ, अग्निधूम चारण युत।
आदीश्वर के शिष्य, नमूँ नमूँ मैं शिरनत।।46।।

ॐ ह्रीं श्रीअग्निदत्तगणधरगुरुपूजितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अप्कायिक बध टाल, मेघों पर चल सकते।
जलधारा पर चलें, चारणऋषि बन करके।।
'मुनीयज्ञ' गणदेव, ऋषभदेव को नमते।
हम पूजें कर सेव, नाम मंत्र जप जपके।।47।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनियज्ञगणधरगुरुनमितांघ्रिपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मकड़ी के तंतु, पर हल्के पग धरते।
बाधा करें न रंच, चारण ऋद्धी धरते।।

'मुनीदेव' गणनाथ, नमूँ नमूँ नित शिरनत।
जजूँ तीर्थंकर नाथ, पाऊँ जिनगुणसंपत्।।48।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिदेवगणधरगुरुवंदितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छंद

जो सूर्य चंद्र ग्रह नखत तारका, किरणों का अवलंबन लें।
बहुतेक योजनों गमन करें, ज्योतिश्चारण क्रिय ऋद्धी लें।।
गुरु 'गुप्तियज्ञ' गणधर बनकर, संपूर्ण ऋद्धि के स्वामी थे।
श्री आदिनाथ के चरण नमें, जो त्रिभुवन अंतर्यामी थे।।49।।

ॐ ह्रीं श्रीगुप्तियज्ञगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धी से मुनि वायु पंक्ति, के आश्रय से नभ में चलते।
स्खलन रहित पग धर धरके, बहुते कोशों तक चल सकते।।
यह वायुचारणा क्रिया ऋद्धि, 'श्रीमित्रयज्ञ' गणधर धरते।
उनके गुरु ऋषभदेव को नित, पूजत ही रोग शोक नशते।।50।।

ॐ ह्रीं श्रीमित्रयज्ञगणधरगुरुवंदितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप ऋद्धी के हैं सात भेद, उनमें हि उग्र तप पहला है।
एकेक उपवास अधिक जीवन भर बढ़ता रहता है।।
गणदेव 'स्वयंभू' ने बहुविध, ऋद्धी से आत्मविकास किया।
श्री ऋषभदेव को ध्या ध्याकर, निज केवलज्ञान प्रकाश लिया।।51।।

ॐ ह्रीं श्रीस्वयंभूगणधरगुरुवंदितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला आदिक उपवास करें, जब ऋद्धि दीप्तमय हो जाती।
आहार न हो बल तेज बढ़े, नहिं होती उन्हें भूख व्याधी।।
यह इस ऋद्धी का ही प्रभाव, तनु में बल माँस रुधिर वृद्धी।
'भगदेव' गणीश्वर वृषभेश्वर, को पूजत मिलती सब सिद्धी।।52।।

ॐ ह्रीं श्रीभगदेवगणधरगुरुनमितांघ्रिपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धी से आहार ग्रहें, वह तपे लोह पर जल सदृश।
नीहार न हो मल मूत्र शुक्र, आदिक धातू नहिं बने विविध।।
बस शक्ति बढ़े तप बढ़े सदा, ''भगदत्त'' गणीश्वर को प्रणमूँ।
श्री ऋषभदेव को नित्य जजूँ, भव भव के कर्म कलंक वमूँ।।53।।

ॐ ह्रीं श्रीभगदत्तगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अणिमादिक चारण आदिक, नाना ऋद्धी से युक्त रहें।
मंदरपंक्ती सिंह निष्क्रीड़ित, आदिक उत्तम उपवास गहें।।
वो चार ज्ञानधारी ऋषिवर, ही महातपो ऋद्धी धारें।
'भगफल्गू' गणधर के गुरुवर, श्री ऋषभदेव भव से तारें।।54।।

ॐ ह्रीं श्रीभगफल्गुगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनशन आदिक बारह विध के, तप उग्र उग्र जो करते हैं।
ज्वर आदिक से पीड़ित हो भी, आतापनादि तप धरते हैं।।
'श्रीगुप्तफल्गु' तप ऋद्धिसहित, गणधर गुरु विघ्न विनायक हैं।
उनके गुरु ऋषभदेव जिनवर, पूजत सुख संपति दायक हैं।।55।।

ॐ ह्रीं श्रीगुप्तफल्गुगणधरगुरुवंदितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि घोर पराक्रम ऋद्धी से, अतिशायी शक्ती पाते हैं।
त्रिभुवन संहार करण जलधी, शोषण में समरथ होते हैं।।
यद्यपि ये कार्य नहीं करते, जगबन्धू 'मित्रफल्गू' गणधर।
उनके गुरु ऋषभदेव जिनवर, मैं पूजूँ भवभय पातकहर।।56।।

ॐ ह्रीं श्रीमित्रफल्गुगणधरगुरुनमितांघ्रिपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अघोर यानी पूर्णशांत, महाव्रत समिती गुप्ती पालें।
वे व्रतमय ब्रह्मा में चरते, अघोर ब्रह्मचर्या पालें।।

इन ऋद्धिसहित 'श्रीप्रजापति' गणधर की भक्ती करने से।
वध रोग कलह दुर्भिक्ष वैर, नशते भगवन् की भक्ती से।।57।।

ॐ ह्रीं श्रीप्रजापतिगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब द्वादशांग अंतर्मुहूर्त, में चिंतन करने में समरथ।
जो मनोबली ऋद्धी धारें, वे शुक्ल ध्यान में हों समरथ।।
'श्रीसर्वसंग' गणधर गुरुवर, इन ऋद्धि सहित भवि सुखदाता।
उनके गुरु श्री ऋषभदेव जिनवर, को पूजत मिले सर्व साता।।58।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वसंगगणधरगुरुनमितांघ्रिपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत द्वादशांग उच्चारण कर पढ़ते नहिं कंठ थके उनका।
वह वचनबली ऋद्धी प्रगटे, वे मेटें जग की सर्व व्यथा।।
'श्रीवरुण' गणी को नित प्रणमूँ, उनके गुरु ऋषभदेव वंदूँ।
श्रुतज्ञान पूर्ण करने हेतू, गणधर जिनवर को नित्य जजूँ।।59।।

ॐ ह्रीं श्रीवरुणगणधरगुरुपूजितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन को भी अंगुलि ऊपर, जो उठा सकें वो कायबली।
नाना विध आसन कायक्लेश, करने से हो यह ऋद्धि भली।।
'धनपालक' गणधर को प्रणमूँ, सब ऋद्धि सिद्धि सुख के दाता।
उनके गुरु ऋषभदेव को नित, मैं पूजूँ मिले सौख्य साता।।60।।

ॐ ह्रीं श्रीधनपालकगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्धड़ी छंद

औषधि ऋद्धी के आठ भेद, आमर्शौषधि यह ऋद्धि एक।
'मघवान' गणी यह ऋद्धि धरें, इन गुरु को वंदत पाप हरें।।61।।

ॐ ह्रीं श्रीमघवानगणधरगुरुपूजितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो क्ष्वेलौषधि ऋद्धी धरते, वे सर्वरोग संकट हरते।
गुरु 'तेजोराशी' गणधर थे, उन गुरु ऋषभेश्वर को जजते।।62।।

ॐ ह्रीं श्रीतेजोराशिगणधरगुरुसेवितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु जल्लौषधि ऋद्धी धरंत, 'महावीर' नाम गणधर महंत।
उनके गुरु पूजूँ आदिनाथ, भवदधि डूबत को देयं हाथ।।63।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मलौषधी धरते महान्, गणईश 'महारथ' भाग्यवान्।
श्री ऋषभदेव के शिष्य मान्य, पूजत ही पावें स्वात्म साम्य।।64।।

ॐ ह्रीं श्रीमहारथगणधरदेवनमितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि विप्रुष औषधि ऋद्धि धार, सब के दुख दारिद्र करें छार।
उनके गुरु ऋषभेश्वर महान्, जो 'विशालाक्ष' गणधर प्रधान।।65।।

ॐ ह्रीं श्रीविशालाक्षगणधरगुरुवंदितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसे स्पर्शित नीर वायु, सब रोग हरे करते चिरायु।
सर्वौषधि धरते 'महाबाल', उनके गुरु पूजूँ जगत्पाल।।66।।

ॐ ह्रीं श्रीमहाबालगणधरगुरुसेवितपादपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिससे कटु या विष व्याप्त अन्न, बस वचन मात्र से निर्विषान्न।
मुखनिर्विष युत 'शुचिसाल' साधु, उनके गुरु को पूजूँ अबाध।।67।।

ॐ ह्रीं श्रीशुचिसालगणधरगुरुवंदितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो रोग विषादि समेत जीव, अवलोकन से हों स्वस्थ जीव।
दृष्टीनिर्विषयुत 'श्रीवज्र' साधु, उन गुरु को जजते स्वात्मस्वादु।।68।।

ॐ ह्रीं श्रीवज्रगणधरगुरुवंदितचरणाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीविष ऋद्धी जो धरंत, दुरआशिष से मरते तुरंत।
श्री 'बज्रसार' न करें प्रयोग, उन गुरु के नमते मिटे शोक।।69।।

ॐ ह्रीं श्रीवज्रसारगणधरगुरुचुंबितचरणारविंदाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टीविषयुत गणि 'चन्द्रचूल' करुणासागर जग के नुकूल।
उनके गुरु ऋषभेश्वर जिनिंद, मैं जजूँ बनूँ अतिशय अनिंद्य।।70।।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रचूलगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर में आया रूखा अहार, पयवत् परिणमता स्वाद धार।
श्री 'जयकुमार' गणधर नमंत, उन गुरु को पूजत सुख अनंत।।71।।

ॐ ह्रीं श्रीजयकुमारगणधरगुरुवंदितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर में आया रुक्षादि अन्न, तप से बन जाता मधुर अन्न।
'महारस' गणधर के गुरु जिनेश, मैं पूजूँ पाऊँ सुख हमेश।।72।

ॐ ह्रीं श्रीमहारसगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्रग्विणी छंद

अमृतास्रावि विष वस्तु अमृत करें।
उन वचन दुःखहर कर्ण अमृत भरें।।
'कच्छ' गणधर उन्हीं के नमूँ पाद को।
शिष्य जिनके उन्हें भी जजूँ भाव सों।।73।।

ॐ ह्रीं श्रीकच्छगणधरगुरुवंदितपादाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्ततल में रखा रुक्ष अन्नादि भी।
दिव्य वच भी अमृतसम करें तुष्टि ही।।

जो 'महाकच्छ' गणधर उन्हों के प्रभू।
मैं जजूँ भक्ति से पाऊँ आनन्द भू।।74।।

ॐ ह्रीं श्रीमहाकच्छगणधरगुरुसेवितपादपद्माय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नमि' महासाधु गणधर बने नाथ के।
ऋद्धि अक्षीण भोजन मिली त्याग से।।
चक्रवर्ती कटक जीम लेवे भले।
ना घटे पाद अर्चूं सदा अर्घ्य ले।।75।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिगणधरगुरुपूजितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू चतुष्कोण हो चार ही धनुष भी।
देव नर भी असंख्ये वहाँ तिष्ठ हीं।।
नाम अक्षीण आलय महाऋद्धि से।
नाथ के शिष्य 'विनमी' जजूँ भक्ति से।।76।।

ॐ ह्रीं श्रीविनमिगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता छंद

'श्रीबल' गणी ऋषभेष के, सब ऋद्धियों के नाथ हैं।
सम्पूर्ण गुण रत्नों भरें फिर भी न कुछ उन पास है।।
जिनदेव के चरणाब्ज षट्पद आत्मसुख में मग्न हैं।
उनको उन्होंके नाथ को पूजत मिले सुख कंद है।।77।।

ॐ ह्रीं श्रीगणधरगुरुचुंबितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अतिबल' गणी ऋषभेश जिन के समवसृति में शोभते।
अठरह सहस शीलों, गुणों से आत्मसुख को पोषते।।
प्रभु भक्ति में लवलीन हो निज आत्म का चिंतन करें।
गणधर गणों से वंद्य जिनवर जजत भव भंजन करें।।78।।

ॐ ह्रीं श्रीअतिबलगणधरगुरुवंदितचरणकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीभद्रबल' चउज्ञानधारी ऋद्धियों से पूर्ण हैं।
उत्तर गुणों से राजते यमदुःख करते चूर्ण हैं।।
ऋषभेश के पदपंकजों की नित्य करते वंदना।
गणधर गुरु को आदिप्रभु को पूजते दुख रंचना।।79।।

ॐ ह्रीं श्रीभद्रबलगणधरगुरुवंदितचरणाब्जाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नंदी' गणाधिप नाथ की दिव्यध्वनि सुन मोदते।
द्वादश गणों को द्वादशांगी में सतत संबोधते।।
निज शुद्ध परमानंदमय ज्ञानाब्धि में अवगाहते।
फिर भी जिनेश्वर चरण वंदे हम उन्हें शिर नावते।।80।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदिगणधरगुरुवंदितपादपंकजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर 'महाभागी' जिनेश्वर पादपंकज ध्यावते।
बहु पुण्य संपादन करें फिर पाप पुण्य नशावते।।
निज में सुपरमाल्हाद अमृत पान कर शिव पावते।
उनके गुरु वृषभेश को हम पूजते अति चाव से।।81।।

ॐ ह्रीं श्रीमहाभागिगणधरगुरुसेवितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीनंदिमित्र' गणेश नित आदीश का वंदन करें।
चौरासी लक्षोत्तर गुणों से पूर्ण भव खण्डन करें।।
संपूर्ण ऋद्धि समेत फिर भी नग्नमुद्रा धारते।
उनको जजूँ जिन को नमूँ फिर तिरूँ भक्तीनाव से।।82।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदिमित्रगणधरगुरुपूजितांघ्रिकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रीकामदेव' गणीश नित तीर्थेश की भक्ती करें।
निज भक्त को तारें भवोदधि से स्वयं गुण से तिरें।।

उनके चरण को वंद कर वृषभेश की पूजन करूँ।
निज साम्य अमृत को पिऊँ यमपाश का छेदन करूँ।।83।।

ॐ ह्रीं श्रीकामदेवगणधरगुरुनमितपादकमलाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अनुपम' गणीश्वर सर्व उपमारहित अनुपम गुण धरें।
संपूर्ण लोक अलोक में निज कीर्ति बल्ली विस्तरें।।
सब ऋद्धि सिद्धि समेत फिर भी आदिजिन के भक्त थे।
हम भी जजें गणधरगुरु जिनराज को अति भक्ति से।।84।।

ॐ ह्रीं श्रीअनुपमगणधरगुरुवंदितपादपंकेरुहाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छंद–पूर्णार्घ्य

श्री ऋषभदेव के चौरासी गणधर जिनमुद्रा धारी थे।
चौरासि हजार महामुनि के स्वामी अनवधि गुणधारी थे।।
श्रीऋषभसेन आदिक गणपति श्रीऋषभदेव की भक्ति करें।
गणधरगुरु नमि तीर्थंकर को पूजत निज आतम पुष्ट करें।।85।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभसेनादिअनुपमपर्यंतचतुरशीतिगणधरदेववंदितचरणाम्बुजाय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचम कोष्ठक पूजा

दोहा

प्रभु अनंत गुण के धनी, शुद्ध सिद्ध भगवंत।
मुख्य आठ गुण को नमूँ, पुष्पांजलि विकिरंत।।1।।

।।अथ मण्डलस्योपरि पंचमकोष्ठस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

तर्ज–आवो बच्चों तुम्हें दिखायें...

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।

जय जय आदिजिनं, जय जय आदिजिनं।
जय जय आदिजिनं, जय जय आदिजिनं।।1।।

दर्शन मोहनी है त्रयविध, चार अनंतानूबंधी।
मोहकर्म को नाश जिन्होंने, पाया क्षायिक समकित भी।।
इस गुण से अगणित गुण पाये, उन गुणमणि श्रीमान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।2।।

वर्ण स्पर्श गंध रस विरहित, शुद्ध अमूर्तिक आत्मा है।
जिनने प्रगट किया निज गुण को, वे प्रबुद्ध परमात्मा हैं।।
गुण गाथा हम गायें निशदिन, ज्योतीपुंज महान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।3।।

ॐ ह्रीं मोहनीयकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय सम्यक्त्वगुण-सहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।4।।

ज्ञानावरण कर्म को नाशा, पूर्णज्ञान प्रगटाया है।
युगपत् तीन लोक त्रयकालिक, जान ज्ञान फल पाया है।।
शत इन्द्रों से वंद्य सदा जो, उन आदर्श महान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।5।।

चौदह गुण स्थान से विरहित, शुद्ध निरंजन आत्मा है।
जिनने निज का ध्यान किया है, वे विशुद्ध सिद्धात्मा हैं।।
मुनियों से भी वंद्य सदा हैं, उन प्रभु ज्योतिर्मान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।6।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरणकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय ज्ञानगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहे जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।7।।

सर्व दर्शनावरण घात कर, केवल दर्शन प्रगट किया।
युगपत् तीन लोक त्रैकालिक, सब पदार्थ को देख लिया।।
जिनको गणधर गुरु भी ध्याते, उन दृष्टा भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।8।।

चौदह जीव समास सहित थे, संसारी जीवात्मा हैं।
इनसे विरहित नित्य निरंजन, शुद्ध बुद्ध परमात्मा हैं।।
योगीश्वर भी वंदन करते, सर्वदर्शि भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरणकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय दर्शनगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।10।।

अंतराय शत्रू के विजयी, शक्ति अनंती प्रगटाई।
काल अनंतानंते तक भी, तिष्ठ रहे प्रभु श्रम नाहीं।।
हम भी करते नित उपासना, अनंत शक्तीमान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।11।।

दशों द्रव्य प्राणों से प्राणी, जन्म मरण नित करता है।
निश्चयनय से शुद्ध चेतना, प्राण एक ही धरता है।।
एक प्राण के हेतु वंदना, शुद्धचेतनावान की।

सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।12।।

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय वीर्यगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।13।।

सूक्ष्मत्व गुण पाया जिनने, नाम कर्म का नाश किया।
सूक्ष्म और अंतरित दूरवर्ती, पदार्थ को जान लिया।।
योगीश्वर के ध्यानगम्य जो, अचिन्त्य महिमावान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।14।।

आहारेन्द्रिय आयू श्वासोच्छ्वास वचन मन पर्याप्ती।
इनसे विरहित शुद्ध चिदात्मा, में असंख्य गुण की व्याप्ती।।
मुनि के हृदय कमल में तिष्ठें, उन गुणरत्न निधान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।15।।

ॐ ह्रीं नामकर्मविनाशकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय सूक्ष्मगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।16।।

आयु कर्म से शून्य जिन्होंने, अवगाहन गुण पाया है।
जिनमें सिद्ध अनंतानंतों, ने अवगाहन पाया है।।
भविजन कमल खिलाते हैं जो, उन अतुल्य भास्वान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।7।।

संज्ञा हैं आहार व भय, मैथुन परिग्रह संसार में।
इनसे शून्य सिद्ध परमात्मा, तृप्त ज्ञान आहार में।।
सिद्धों का वंदन जो करते, मिले राह कल्याण की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।18।।

ॐ ह्रीं आयुकर्मविनाशकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय अवगाहनगुण-सहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।19।।

ऊँच नीच विध गोत्रकर्म को, ध्यान अग्नि में भस्म किया।
अगुरुलघु गुण से अनंत युग, तक निज में विश्राम किया।।
त्रिभुवन के गुरु माने हैं जो, उन अविचल गुणवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।20।।

चतुर्गती के नाना दुःखों, से जो जन अकुलाये हैं।
वे ही पूजा भक्ती करने, चरणशरण में आये हैं।।
मैं भी भक्ती करके छूटूँ, उन श्रीसिद्ध महान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।21।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय अगुरुलघुगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।22।।

सात असाता द्विविध वेदनी, ध्यान अग्नि से जला दिया।
अव्याबाध सुखामृत पीकर, निज से निज को तृप्त किया।।

भक्ति नाव से भव्य तिरें जो, उन शुद्धात्म महान की।
सिद्धशिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।23।।

शारीरिक मानस आगंतुक, नाना दुःख उठाये हैं।
जो इन दुःखों से विरहित हैं, शरण उन्हीं की आये हैं।।
स्वात्म सुखामृत पीने हेतू, शरण सिद्ध भगवान की।
सिद्धशिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।24।।

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मविघातकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय अव्याबाधगुणसहिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

पूर्णार्घ्य

आओ हम सब करें अर्चना, ऋषभदेव भगवान की।
सिद्ध शिला पर राज रहें जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।25।।

शुक्लध्यान की अग्नि जलाकर, आठ कर्म को भस्मकिया।
केवलज्ञान सूर्य को पाकर, आठ गुणों को व्यक्त किया।।
सिद्धों का जो वंदन करते, मिले राह कल्याण की।
सिद्ध शिला पर तिष्ठ रहे जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।26।।

यह अपार भवसागर भव्यों, दुःखी नीर से भरा हुआ।
इसको पार करें हम सब जन, भक्ति नाव अवलम्ब लिया।।
सिद्धों का जो वंदन करते, मिले राह कल्याण की।
सिद्ध शिला पर तिष्ठ रहे जो, उन अनंत गुणखान की।।
जय जय आदिजिनं-4।।27।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशकायतथैवकर्मनाशनशक्तिप्रदाय सम्यक्त्वादिप्रमुख-अष्टसिद्धगुणसमन्विताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवाय सर्वसिद्धिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।**
(सुगंधित पुष्पों से या लवंग से 108 बार जाप्य करें।)

जयमाला

दोहा

भूत भावि तीर्थेश की, चौबीसी आनन्त्य।
पुरी अयोध्या में कही, नमूँ नमूँ जगवंद्य।।1।।

शेर छंद

जय जय श्रीपुरुदेव नाभिराय के नंदा।
जय जय युगादिदेवदेव प्रथम जिनंदा।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
जिनधर्म निधि पाय मैं धनवान हो गया।।1।।टेक.।।

प्रभु आपने जीने की कला सबको सिखायी।
असि मषि कृषि वाणिज्य आदिक्रिया बताई।।हे नाथ.।।2।।

ब्राह्मी व सुन्दरी को विद्याध्ययन कराया।
ब्राह्मी लिपी व गणित ज्ञान जगत ने पाया।।हे नाथ.।।3।।

सब पुत्र को सम्पूर्ण विद्या दान दिया था।
राजा बना के राजनीति ज्ञान दिया था।।हे नाथ.।।4।।

नीलांजना के नृत्य से विरक्त हुये थे।
माता-पिता परिवार सभी त्याग दिये थे।।हे नाथ.।।5।।

रानी यशस्वती सुनंदा को भी तजा था।
सुत इक सौ एक दो सुताओं को भी तजा था।।हे नाथ.।।6।।

प्रभु सिद्ध की साक्षी से मुनिनाथ हुये थे।
इक सहस वर्ष बाद केवलज्ञानि हुये थे।।हे नाथ.।।7।।

प्रभु के समवसरण में थीं बारह सभा बनीं।
जिसमें असंख्य भव्य सुन रहे थे जिनध्वनी।।हे नाथ.।।8।।

श्री ऋषभसेन आदी गणधर थे चौरासी।
मुनिराज चौरासी हजार, स्वात्म विकासी।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
जिनधर्म निधि पाय मैं धनवान हो गया।।9।।

ब्राह्मी प्रमुख गणिनी थीं, आर्यिकाओं में प्रथम।
थीं साढ़े तीन लाख आर्यिकायें स्वच्छमन।।हे नाथ.।।10।।

त्रयलाख सु श्रावक व पाँच लाख श्राविका।
चक्री भरत सम्राट वहाँ मुख्य थे श्रोता।।हे नाथ.।।11।।

जो चार सहस नृपति दीक्षा भ्रष्ट हुये थे।
वे तुम शरण में आके शुद्ध स्वस्थ हुये थे।।हे नाथ.।।12।।

जो थे मरीचि भ्रष्ट अन्त्य तीर्थंकर हुये।
प्रभु देशना परम्परा से वीर बन गये।।हे नाथ.।।13।।

प्रभु आप ही अनंतानंत गुणों के धनी।
प्रभु लोक औ अलोक के द्रष्टा कहें मुनी।।हे नाथ.।।14।।

वर ज्ञानदर्श सौख्य वीर्य अगुरुलघु थे।
अवगाहना सूक्ष्मत्व अव्याबाध सुगुण थे।।हे नाथ.।।15।।
इन आठ गुण से आप सिद्धिनाथ कहाये।
पुनरागमन से रहित त्रिजगनाथ कहाये।।हे नाथ.।।16।।

सब अतिशयों से पूर्ण दोषशून्य ईश हो।
ब्रह्मा महेश विष्णु नमाते हैं शीश को।।हे नाथ.।।17।।

प्रभु आप कीर्ति आज सर्व ग्रन्थ गा रहे।
तुम भक्ति से समस्त इष्ट सिद्धि पा रहे।।हे नाथ.।।18।।

हे नाथ! इसी हेतु आप शरण में आया।
कैवल्य ''ज्ञानमती'' हेतु माथ नमाया।।हे नाथ.।।19।।

दोहा

नाथ! आप गुणरत्न को, गिनत न पावें पार।
तीन रत्न के हेतु मैं, नमूँ अनंतों बार।।10।।

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

शेर छंद

जो भव्य ऋषभदेव का विधान यह करें।
सम्पूर्ण अमंगल व रोग शोक दुख हरें।।
अतिशायि पुण्य प्राप्त कर ईप्सित सफल करें।
कैवल्य ज्ञानमती से जिनगुणसकल भरें।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

इति शं भूयात्।

प्रशस्ति

शंभु छंद

हे ऋषभदेव! हे वृषभनाथ! हे आदिनाथ! पुरुदेव! नमन।
ये नाम प्रसिद्ध आपके फिर भी, तुम्हीं आदि ब्रह्मा भगवन्।।
प्रभु तृतिय काल के अंत में ही, तुम जन्मे उसमें मोक्ष गये।
थी वर्ष चौरासी लाख पूर्व, आयू पहले तीर्थेश हुये।।1।।

साढ़े उनतालिश सहस्र वर्ष, कम इक कोड़ाकोड़ी सागर।
यह चौथा काल व्यतीत हुआ, अब पंचमकाल कहा दुष्कर।।
इसमें चौरासी लाख पूर्व, वर्षों को और मिलाने से।
हो गया ऋषभजिन को इतना, यह समय आज जब जन्मे थे।।2।।

जब चौथे काल में तीन वर्ष, साढ़े अठ मास थे शेष बचे।
तब वीर प्रभू निर्वाण गये, अतएव वीर प्रभु शासन ये।।

जब पंचमकाल में इतना ही, अवशेष काल रह जायेगा।
तब तक जिनधर्म अविच्छिन्न, वीरांगज मुनि तक जायेगा।।3।।

श्री वीर प्रभू के शासन में, श्रीकुन्दकुन्द आचार्य हुये।
श्री मूलसंघ सरस्वती गच्छ, गण बलात्कार में मान्य हुये।।
इस परम्परा में चरित चक्रि, श्री शांतिसागराचार्य हुये।
इनके ही प्रथम शिष्य पट्टाधिप, वीरसागराचार्य हुये।।4।।

इनकी शिष्या मैं ज्ञानमती, आर्यिका महाव्रति गणिनी हूँ।
जिनभक्ती से बहुविध विधान, रचना करके भवहरणी हूँ।।
श्रीवीरनिर्वृति संवत् पचीस सौ, उन्निस शरद् पूर्णिमा दिन।
श्री ऋषभदेव पूजन विधान, मैं पूर्ण किया अतिशय उत्तम।।5।।

यह तीर्थ अयोध्या महातीर्थ, यहाँ ऋषभदेव जिन आलय है।
ऊँची इकतिस फुट प्रतिमा है, यह मंदिर भव्य सुखालय है।।
जिनमंदिर निकट वसतिका में, यह वर्षायोग मेरा सुखप्रद।
त्रय चौबीसी जिन समवसरण, दो मंदिर के निर्माण सुखद।।6।।

अब आगे माघ शुक्ल में पंच-कल्याणक उत्सव होवेगा।
वर महामस्तकाभिषेक उत्तम, ऋषभदेव का होवेगा।।
इक दिन ब्रह्मचारी रवीन्द्र कुमार ने, आग्रह किया यहाँ मुझसे।
श्री ऋषभदेव मण्डल विधान, रचिये आदीश्वर भक्ती से।।7।।

मैंने भी ऋषभदेव प्रणमन, करके विधान प्रारम्भ किया।
छ्यालिस गुण अठारह दोष रहित, श्रीऋषभदेव की शरण लिया।।
चौरासी गणधर गुरुओं से, वंदित जिनचरणों का वंदन।
वर सिद्ध अष्ट गुण के स्वामी, गुणमुख्य आठ से किया यजन।।8।।

इस जिनविधान में दो सौ चार हैं, अर्घ्य पाँच पूर्णार्घ्य कहें।
सब संकटहर सब ईप्सितप्रद, सुखकर विधान अतिशायि रहे।।
जब तक जिनशासन इस जग में, सब भविजन मन आनंद भरे।
तब तक मुझ ज्ञानमती कृति यह, भाक्तिकजन की सब सिद्धि करे।।9।।

भगवान श्री ऋषभदेव की आरती

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–जयति जय जय मां सरस्वति........

जयति जय जय आदि जिनवर, जयति जय वृषभेश्वरं।
जयति जय घृतदीप भरकर, लाए नाथ जिनेश्वरं।।टेक.।।

गर्भ के छह मास पहले से रतनवृष्टी हुई।
तेरे उपदेशों से प्रभु जग में नई सृष्टी हुई।।
मात मरूदेवी पिता श्री नाभिराय के जिनवरं।।जयति.....।।1।।

जन्मभूमि नगरि अयोध्या त्याग भूमि प्रयाग है।
शिव गए कैलाशगिरि से तीर्थ ये विख्यात है।।
पंचकल्याणकपती पुरूदेव देव महेश्वरं।।जयति...........।।2।।

तुमसे जो निधियां मिलीं वे इस धरा पर छा गईं।
नर में ही नहिं नारियों के भी हृदय में समा गईं।।
मात ब्राह्मी-सुन्दरी के पूज्य पितु जगदीश्वरं।।जयति.....।।3।।

तेरी आरति से प्रभो आरत जगत का दूर हो।
''चंदनामती'' रत्नत्रय निधि मेरे मन में पूर्ण हो।।
ज्ञान की गंगा बहे आशीष दो परमेश्वरं।।जयति..........।।4।।

भजन

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–कांची हो कांची रे......

आओ रे आओ रे सब मिल के आओ जन्म जयंती मनाओ रे।
गाओ रे गाओ रे सब मिल के गाओ ऋषभदेव के गुण गाओ रे।।टेक.।।

प्रभु ऋषभदेव का जन्मोत्सव करो,
उत्सव ही नहीं महामहोत्सव करो।
नगरी सजाय के, तोरण लगाय के, रथयात्रा मेला भराओ रे।ओ ओ...
आओ रे आओ रे.......।।1।।

भारतीय संस्कृति के आद्य प्रणेता,
जिनधर्म के सूर्य मुक्ती के नेता।
प्रभु आदिनाथ हैं, यही प्रमुख बात है, इसको जगत में बताओ रे।।
आओ रे........।।2।।

गणिनी माता ज्ञानमती जी ने बताया,
जयंती महोत्सव का रूपक बनाया।
धर्म का प्रचार हो, जिनवर जयकार हो, ऐसी सुरभि फैलाओ रे।
आओ रे.......।।3।।

राजधानी दिल्ली केन्द्रबिंदु बनीं,
अयोध्या, प्रयाग, हस्तिनापुर में भी।
सारे ही देशों में, शहर और प्रदेशों में ''चन्दनामती'' गुण गाओ रे।।
आओ रे......।।5।।

भजन

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–दीदी तेरा......

ऋषभजयंती सब मनाओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।
तीर्थंकर की महिमा बताओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।।
जय जय......प्रभो।।टेक.।।

धरा पर थी जब भोगभूमि व्यवस्था, सभी कल्पवृक्षों से फल माँगते थे।
पुनः जब हुई कर्मभूमि व्यवस्था, ऋषभदेव जिनवर जनम धारते थे।।
उनकी जीवनगाथा सुनाओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।।
ऋषभ......।।1।।

दुःखी जनता को षट्क्रियाएँ बताकर, जीवन कला को सिखाया प्रभू ने।
पुनः मुक्तीपथ पर स्वयं चल के भव्यों को, मुक्ती का पथ भी दिखाया प्रभू ने।।
वही पंथ जग को दिखाओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।।
ऋषभ......।।2।।

मिली प्रेरणा ज्ञानमति माताजी से, ऋषभदेव का जन्म उत्सव मनाओ।
ऋषभ वीर कोई भी जिनधर्म के, संस्थापक नहीं हैं जगत को बताओ।।
जिनधर्म की महिमा फैलाओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।।
ऋषभ......।।3।।

जो कर्मों को जीतें वे जिन हैं तथा, उनके सब भक्तों को जैन कहते हैं आगम।
मनुज क्या पशू भी इसे धार सकते, यही ''चन्दनामती'' बताते जिनागम।।
घर-घर में ये ज्योति जलाओ, महावीर के गुणों को भी गाओ।।
ऋषभ......।।4।।

भजन

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–दिल्ली का कुतुबमीनार देखो....

देखो देखो देखो, जन्मभूमि देखो,
ऋषभ जन्मभूमि का विकास देखो, अयोध्यापुरी का प्रकाश देखो।
सारे जगत में इस तीर्थ का, फैला है नाम तुम आज देखो।।
हो हो देखो देखो, अयोध्या देखो-2 ।।टेक.।।

कहते हैं जिनशासन का, पहला शाश्वत तीर्थ यही।
तीर्थंकर भगवन्तों के, जन्म सदा होते हैं यहीं।।
उनकी ही महिमा का सार देखो, तीरथ अयोध्या विकास देखो।
सारे जगत में इस तीर्थ का, फैला है नाम तुम आज देखो।।
हो देखो देखो, अयोध्या देखो.।।1।।

वर्तमान चौबीसी के, पाँच तीर्थंकर जन्मे हैं।
उनके पाँचों टोंक यही, पुण्य कथानक कहते हैं।।
उन सबका हो रहा विकास देखो, जिनवर के गुण का प्रकाश देखो।
सारे जगत में इस तीर्थ का, फैला है नाम तुम आज देखो।।
हो देखो देखो, अयोध्या देखो.।।2।।

ज्ञानमती माताजी की, मिली प्रेरणा है सबको।
शाश्वत तीर्थ अयोध्या का, खूब प्रचार करो भक्तों।।
''चन्दनामती'' यह प्रयास देखो, जिनमत का होगा प्रकाश देखो।
सारे जगत में इस तीर्थ का, फैला है नाम तुम आज देखो।।
हो देखो देखो, अयोध्या देखो.।।3।।